अंधेर नगरी

बी.ए.-II हिन्दी (अनिवार्य)

B.A.-II Hindi (Compulsory)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय

रोहतक–124 001

Copyright © 2003, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय-सूची

खण्ड क	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र : साहित्यिक परिचय	5
खण्ड ख	अंधेर नगरी : कथा–सार	10
खण्ड ग	समीक्षात्मक प्रश्न	13
1.	'अंधेर नगरी' नाटक की तात्विक समीक्षा	13
2.	'अंधेर नगरी' का उद्देश्य	17
3.	अभिनेयता की दृष्टि से 'अन्धेर नगरी' नाटक की समीक्षा	21
4.	'अन्धेर नगरी' के नामकरण की सार्थकता	24
5.	'अन्धेर नगरी' नाटक के आधार पर महन्त जी का चरित्र–चरित्रण	27
6.	'अन्धेर नगरी' के आधार पर गोवर्धन दास का चरित्र–चित्रण	30
7.	'अन्धेर नगरी' नाटक के आधार पर चौपट्ट राजा का चरित्र–चित्रण	32
8.	''अन्धेर नगरी एक सफल प्रहसन है'' समीक्षा	34
9.	समकालीन संदर्भ में 'अन्धेर नगरी' की प्रांसगिता	35
10.	'अन्धेर नगरी' के गीतों का औचित्य	38
11.	भारतेन्दुकृत 'अन्धेर नगरी' की भाषा–शैली	41

बी.ए.-II हिन्दी (अनिवार्य)

अंधेर नगरी

(भारतेन्दु हरिश्चन्द्र)

पूर्णांकः 100

समयः 3 घंटे

अंधेर नगरी-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

निर्देशः

1. काव्य पुस्तक से व्याख्या के लिए चार पद्यावतरण पूछे जाएंगे जिनमें से परिक्षार्थियों को दो की व्याख्या करनी होगी। प्रत्येक व्याख्या आठ अंकों की होगा। पूरा प्रश्न 16 अंकों का होगा।
2. काव्य पुस्तक से संबंधित किन्हीं तीन कवियों का साहित्यिक परिचय पूछा जाएगा जिनमें से परिक्षार्थियों को किसी एक का उत्तर देना होगा। यह प्रश्न 10 अंकों का होगा।
3. अंधेर नगरी से चार लघुत्तरी प्रश्न पूछे जाएंगे जिनमें से परिक्षार्थियों को दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 6 अंकों का होगा।
4. ''जहाज का पंछी'' उपन्यास से चार आलोचनात्मक प्रश्न पूछे जाएंगे जिनमें से परिक्षार्थियों को दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 10 अंकों का होगा।
5. ''अभिनव गद्य गरिमा'' से चार गद्यांश पूछ जाएंगे जिनमें से परिक्षार्थियों को दो की सप्रसंग व्याख्या करनी होगी। प्रत्येक व्याख्या 8 अंकों की होगी। इनमें 4 लघुत्तरी प्रश्न पूछे जाएंगे। जिनमें से परिक्षार्थियों को किन्हीं दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 5+5 अंकों का होगा।
6. आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहस से दस प्रश्न अति लघुत्तरी पूछे जाएंगे। जिनमें से परिक्षार्थियों को 8 प्रश्नों का उत्तर देना होगा। प्रत्येक का उत्तर लगभग 150 शब्दों में देना होगा। प्रत्येक प्रश्न 2 अंकों का होगा। पूरा प्रश्न 16 अंकों का होगा।

खण्ड क
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र : साहित्यिक परिचय

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र आधुनिक हिन्दी–साहित्य के प्रवर्तक माने जाते हैं। इनका जन्म भाद्रपद शुक्ल, ऋषि सप्तमी संवत् 1907 अर्थात् 9 सितम्बर 1850 में काशी के एक सुप्रसिद्ध सेठ परिवार में हुआ था। इनके पूर्वजों का सम्बन्ध दिल्ली के शाही घराने से था। भारतेन्दु के पिता श्री गोपालचन्द वैष्णव थे और ब्रजभाषा में कविता किया करते थे इन्होंने अपने जीवन काल में चालीस ग्रन्थ लिखे थे, जिनमें से चौबीस अब भी प्राप्त हैं। जब भारतेन्दु केवल पांच वर्ष के थे तो इनकी माता देहावसान हो गया था और इसके चार वर्ष बाद पिता भी इस संसार को छोड़ गये। इस प्रकार आरम्भ से ही माता–पिता के स्नेह से वंचित होकर इन्होंने जीवन में प्रवेश किया। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर में ही पूरी हुई। बाद में ये क्वींस कॉलेज में दाखिल हुए पर किसी कारणवश अपनी शिक्षा पूरी नहीं कर पाये। ये हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू , मराठी, गुजराती, बंगला, पंजाबी, मारवाड़ी और संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे। यद्यपि इन्होंने एक विद्यार्थी की तरह पाठशाला या कॉलेज में विद्याध्ययन नहीं किया, पर सरस्वती की आराधना में यह आजीवन लगे रहे। यह वल्लभ सम्प्रदाय की विचारधारा से प्रभावित थे जिसका स्पष्ट प्रभाव इनके काव्य पर दिखायी देता है। उस काल में साधन रहित और विपरीत स्थितियों में भी इन्होंने देश भ्रमण के अपने शौंक को पूरा किया था। जगन्नाथ पुरी, अयोध्या, बैद्यनाथ, उदयपुर आदि के भ्रमण के दौरान इन्होंने वहां की पूरी जानकारी प्राप्त की थी और स्वयं को देश के विभिन्न भागों से जोड़ने में सफलता प्राप्त की थी। इन्होंने कुछ समय तक व्यापार भी किया था लेकिन उसमें इन्हें विशेष सफलता नहीं मिली थी। यह उदार स्वभाव के थे, खुले हाथ के स्वामी थे इसलिए अपने पूर्वजों की सम्पत्ति को सम्भाल कर नहीं रख पाये थे। जरूरतमंद लोगों को यह भरपूर सहायता दे दिया करते थे इसलिए अपने जीवन में ही निर्धन हो गये थे पर फिर भी दीन–दुःखियों की सहायता किया करते थे। वह बहुत विनोद प्रिय और मनमौजी स्वभाव के थे। यह स्वाभिमानी थे और सत्य की डगर पर डटे रहने वाले थे। इनका देहावसान अत्यन्त छोटी अवस्था में माघ कृष्णा 6, संवत् 1941 अर्थात् सन् 1885 में जनवरी मास में तपेदिक से हुआ था। उस समय इनकी अवस्था 34 वर्ष 4 मास थी।

रचनाएँ :

भारतेन्दु की रचनाओं की संख्या इतनी अधिक है कि उन्हें देख कर उनकी प्रतिभा, लग्न और अध्यवसाय पर आश्चर्य होता हैं उनमें जन्म जात काव्य प्रतिभा थी। उन्होंने एक बार मात्र पांच वर्ष की अबोध अवस्था में काव्य रचना की थी। उनके द्वारा रचित दोहे ने उनके कवि पिता को भी आश्चर्य में डाल दिया था। उनका स्वरचित पहला दोहा था––

ले व्योड़ा ठाढ़े भय श्री अनिरुद्ध सुजान।

बाणासुर की सैन को हनन लगे बलवान।।

इन्होंने, आयु के बढ़ने के साथ, बहुत बड़ी मात्रा में साहित्य की रचना की थी। साहित्यिक रचनाओं के साथ–साथ 'कविवचन सुधा' तथा 'हरिश्चन्द्र–चन्द्रिका' पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन और प्रकाशन कार्य भी किया था। यह सच्चे राष्ट्र भक्त थे जिन्होंने साहित्य के माध्यम से जनमानस के रोष को व्यक्त किया था और जनता के पथ प्रदर्शक के रूप में स्थापित किया था। डॉ॰ जयशंकर त्रिपाठी के अनुसार उनके द्वारा रचित छोटे–बड़े ग्रन्थों की संख्या 239 है। इनकी प्रमुख रचनाओं को विभिन्न प्रकार के आधारों पर स्थित कर सकते हैं–

(क) **नाटक :** वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, प्रेम जोगिनी, श्री चन्द्रावली नाटिका, विषस्य विषमौषधम्, भारत दुर्दशा, नील देवी, अन्धेर नगरी, सती प्रलाप, विद्यासुन्दर, पाखण्ड विडम्बन, धनंजय विजय, कर्पूर मंजरी,सत्य हरिश्चन्द्र, भारत जननी , मुद्राराक्षस, दुर्लभ बन्धु।

(ख) **काव्य –संग्रह :** प्रेम–माधुरी, प्रेम फुलवारी, प्रेम मालिका, प्रेम प्रलाप, फूलों का गुच्छा।

(ग) पत्र–पत्रिकाएं : कवि वचन सुधा, हरिश्चन्द्र मैगज़ीन बाला बोधिनी , हरिश्चन्द्र चन्द्रिका।

(घ) इतिहास, निबन्ध और आख्यान : सुलोचना, लीलावती, मदाल सोपाख्यान, परिहास पंचक, परिहासिनी, काश्मीर कुसुम, महाराष्ट्र देश का इतिहास, रामायण का समय, अग्रवालों की उत्पत्ति,खत्रियों की उत्पत्ति, बादशाह दर्पण, बूंदी का राजवंश, उदयपुरोदय, पुरावृन्तसंग्रह, चरितावली, पंच पवित्रात्मा।

(ङ) रूपान्तरित :

बंगला से –विद्यासुन्दर

संस्कृत से–सत्य हरिश्चन्द्र

(च) अनूदित : रत्नावली, पाखण्ड विडम्बन, धनंजय विजय, मुद्राराक्षस, कर्पूर मंजरी, दुर्लभ बन्धु।

साहित्यिक रचनाएँ :

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं––

1. **भक्ति–भावना :** भारतेन्दु पुष्टि सम्प्रदाय के कृष्ण–भक्त कवि थे, जिस कारण उनकी कविता का काफ़ी बड़ा भाग वैष्णव साहित्य के अन्तर्गत आता है। इनके लगभग 1500 पद 'राधा–कृष्ण लीला' से सम्बन्धित हैं जिन पर रीति काव्य का पर्याप्त प्रभाव है। बाल–लीला, राधा–कृष्ण प्रेम–विलास, मान, रूप–वर्णन, वंशी, दान, विरह , मिलन, भ्रमरगीत आदि के अतिरिक्त इन्होंने विनय, दैन्य, होली, वसन्त, फाग, वर्षा आदि से सम्बन्धित पद लिखे। इनका काव्य सूरदास के काव्य पर आधारित है, जैसे––

   (क) मेरे तो राधिका नायिका की गति
   लोक दोऊ रहै कै नसि जाओ।

   (ख) मेरे तो साधन एक ही हैं,
   जय नन्दलला वृषभानु कुमारी।

   (ग) छिपाये छिपत न नैन लगे।
   उधरि परत, सब जानि जात हैं, घूंघट में न खगे।।

   (घ) चिर जीवो मेरे कुंवर कन्हैया।
   इन नैनन हौं नित–नित देखों रामकृष्ण दोउ भैया।।

   (ङ) ब्रज के लता–पता मोहि कीजै।
   गोपी–पद–पंकज पावन को रज जायैं सिर भीजै।।

2. **शृंगारिकता :** भारतेन्दु ने रीतिकालीन कवि पद्माकर, घनानन्द, रसखान आदि की तरह शृंगारिक कवित्त और सवैये लिखे। इनकी शृंगारिकता का आधार राधा–कृष्ण का प्रेम है। यद्यपि इन्होंने शृंगार के संयोग और वियोग दोनों पक्षों पर अपनी लेखनी चलाई पर इन्हें वियोग चित्रण करने में अधिक सफलता प्राप्त हुई। इन्होंने प्रेम के उदात्त स्वरूप का सुन्दर अंकन किया। इनकी प्रेम–भावना शिष्ट और संयत है। रीतिकालीन प्रभाव के वश में होने पर भी इन्होंने अश्लीलता से बच कर काव्य रचना की है।

3. **देश–प्रेम :** भारतेन्दु का समय विक्टोरिया का शासन काल है। इन्होंने भारतीय लोगों का ध्यान देश की गुलामी की ओर आकृष्ट किया है––

   रोअहु सब मिलि कै, आवहु भारत भाई।
   हा ! हा !! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।

इन्होंने स्थान–स्थान पर देश की दीन–हीन दशा के चित्र अंकित किए हैं। **''पै धन विदेस चलि जात यहै अति ख्वारी''** तथा **'' उपधर्म छूटै, सत्व निज भारत गहै, कर–दुःख बहै''** आदि पंक्तियों में इनकी देश–भक्ति की भावना झलकती है। इनकी देशभक्ति राष्ट्र भक्ति में छिपी हुई है। तत्कालीन शोषण के विषय में इन्होंने लिखा है––

कछु तै वेतन में गयो, कछुक राजकर मांहि।

बाकी सब व्यौहार में गयो, रह्यौ कछु नांहि।।

4. **सामाजिक चित्रण** : भारतेन्दु को सामाजिक विषयों में विशेष रूचि थी। वे प्रत्येक कल्याणकारी सामाजिक आन्दोलन में भाग लेने को सदा तत्पर रहते थे। उन्होंने विभिन्न सामाजिक दोषों के निराकरण की ओर ध्यान दिया––

रचि बहु विधि के वाक्य पुरातन माहिं घुसाए।

शैव, शक्ति, वैष्णव अनेक मत प्रकट चलाए।।

हरि कुलीन के बहुत ब्याह बल बीरज मारयो।

विधवा ब्याह निषेध किये, व्यभिचार प्रचारयो।।

धार्मिक पाखण्ड, मत मतान्तरों का प्रचार, अनेक जातियों की उत्पत्ति, छुआछूत, विधवा विवाह, अन्धविश्वास आदि के बारे में इन्होंने काव्य रचना की। भारतेन्दु की विचारधारा हिन्दू समाज का उत्थान करने की ओर थी। वे न तो हिन्दू समाज को छोड़ने को तैयार थे और न ही उसे ज्यों–का–त्यों अपनाने को तैयार थे। वे स्त्री–शिक्षा के समर्थक थे। वे केवल साहित्यकार नहीं थे बल्कि समाज सुधारक भी थे। इन्होंने ठुमरी, लावनी, ग़जल, ख्याल, नौटंकी के गाने और सामाजिक आचार–व्यवहार तथा उत्सवों पर गाये जाने वाले गानों की रचना की।

5. **प्रकृति–चित्रण** : भारतेन्दु ने अपने काव्य में प्रकृति के चित्रों को उतारने का प्रयास किया पर उन्हें इस क्षेत्र में अधिक सफलता नहीं मिला। उनके मानव प्रकृति के चित्र शुद्ध यथार्थ हैं। गंगा और यमुना का इन्होंने सौन्दर्य अंकित किया है पर इनमें मानव हृदय पर प्राकृतिक दृश्य द्वारा पड़े प्रभाव ही विशेष रूप से अंकित हुए हैं––

(क) लांल लहर लहि पवन एक पै इक इमि आवत।

जिमि नरगन–मन विविध मनोरथ करत मिटावत।।

(ख) कहुँ तीर पर कमल अमल सोभित बहु भाँतिन।

कहुँ सैवालनि मध्य कुमुदिनी लगी रही पांतिन।।

मनु दृग धारि अनेक जमुन निरखत ब्रज सोभा।

कै उमंगै प्रिय–प्रिया प्रेम के अगनित गोभा।

भारतेन्दु ने प्रकृति–चित्रण के नाम पर पक्षियों के नाम गिनवाये हैं जो किसी भी प्रकार प्रकृति चित्रण नहीं है जैसे––

'कूजत कहुँ कल हँस, कहुँ मज्जत पारावत।

कहुँ कारंइव उड़त कहुँ जल कुक्कट धावत।।'

ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकृति–चित्रण का कोई काव्यमय आदर्श उनके सामने नहीं था।

6. **हास्य–व्यंग्य का समावेश** : भारतेन्दु का स्वभाव मनोविनोद से परिपूर्ण था। वह जीवन के हर पल में हास्य–व्यंग्य के लिए अपने लिए अनुकूल अवसर ढूंढ निकालते थे। उन्होंने साहित्य के माध्यम से शिष्ट हास्य की सृष्टि की है। 'बन्दर–सभा' में उन्होंने तत्कालीन निम्नकोटि के नाटकों का मज़ाक उड़ाया है तो 'उर्दू का स्यापा' में हिन्दी के प्रति प्रेम को प्रकट किया है। 'अन्धेर नगरी' और 'हिंसा हिंसा न भवति' में उनके हास्य–व्यंग्य की स्पष्ट झलक दिखायी देती है––

चूरन सभी महाजन खाते जिससे जमा हज़म कर जाते।

चूरन खाते लाला लोग जिसको अकिल अजीरम रोग।

चूरन खावैं एडिटर जात जिन के पेट पचै नहि बात।

चूरन साहेब लोग जो खाता सारा हिन्द हज़म कर जाता।

चूरन पुलिस वाले खाते सब कानून हज़म कर जाते।

7. **भाव– चित्रांकन** : भारतेन्दु के साहितय में सामान्य देशवासियों की भावनाओं का प्रकाशन हुआ है। उन्होंने सर्वत्र और सर्वदा रूढ़ियों और परम्पराओं का विरोध किया। उन्होंने अपने साहित्य का प्रयोग लोगों को जागरूक बनाने में किया था इसीलिए आचार्य विश्वनाथ प्रसाद ने उनके विषय में लिखा था, ''सच तो यह है कि जनहित और जनरूचि के साथ अपनी कला को एक कर देने की प्रतिभा हिन्दी साहित्य में तुलसी दास के बाद यदि किसी कवि में अविर्मूत हुई तो भारतेन्दु में।'' उन्होंने समाज के सभी वर्गों और क्षेत्रों को खोजी दृष्टि से देखा था और उसे सुधारने का प्रयत्न किया था।

8. **रस–योजना** : भारतेन्दु की रस–योजना इनके नाटकों और काव्यों में दिखाई देती है। नाटकों में इन्होंने करुण, वीर, रौद्र, वात्सल्य, वीभत्स और भयानक रसों के बड़े स्वाभाविक स्थल उपस्थित किये हैं पर काव्य में प्रमुख रूप से श्रृंगार और शान्त रसों को उपस्थित किया है। विलास, उद्दाम, काम वासना और व्यभिचार को प्रोत्साहन देना भारतेन्दु की श्रृंगारिक रचनाओं का उद्देश्य नहीं था। उनकी श्रृंगारिक रचनाएं, वास्तव में उनके तत्सम्बन्धी शास्त्रीय सिद्धांतों के उदाहरण स्वरूप ही हैं। इन्होंने प्राचीन रसों से भिन्न कुछ नवीन रसों की योजना भी की है। मनोवैज्ञानिक एवं विद्वतापूर्ण तर्कों के आधार पर वात्सल्य, सख्य, भक्ति ओर आनन्द इन चारों रसों की उद्भावना हिन्दी काव्य को उनकी मौलिक देन है।

9. **अलंकार विधान** : भारतेन्दु की रचनाओं में अलंकार की छटा भी दिखाई देती है। उन्होंने शबदालंकार और अर्थालंकार दोनों का सुन्दर स्वाभाविक प्रयोग किया है। रीतिकालीन कवियों की तरह उन्होंने शब्दों की कलाबाजी से अपनी रचनाओं को बहुत बचाया है। अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा श्लेष, यमक, उदाहरण सन्देह, उदात्त, वक्रोक्ति, उल्लेख, अतिश्योक्ति, प्रतीप, विभावना आदि अलंकार इनकी रचनाओं में मिलते हैं। कहीं–कहीं इन्होंने अलंकारों का कृत्रिम रूप भी काव्य में प्रस्तुत किया है जैसे––

सत्यासक्त दयाल द्विज , प्रिय अघहर सुखकन्द।

जनहित कमला तजन जाय, शिव नृप कवि हरिश्चन्द्र।।

जहां कहीं इन के काव्य में भावावेश का आग्रह है वहां उनके प्रवाह में अलंकारों की चिन्ता का अवसर नहीं मिला है। ऐसे अवसर पर इनकी रचनाओं में अलंकार स्वायाविध रीति से आये हैं।

10. **छन्द–योजना** : भारतेन्दु की छन्द–योजना अत्यन्त सफल हैं उन्होंने इस क्षेत्र में रीतिकाल की प्रक्रिया और प्रणाली को ही अंगीकार किया है, किसी नवीन शैली की उद्भावना नहीं की है। पद, कवित्त, सवैया, रोला, दोहा, छप्पय आदि छन्दों का उनकी रचनाओं में प्रचुर विधान है। कवित्त में मनहरण और सवैया में मत्तगयन्द, दुर्भिक्ष आदि मिलते हैं। इन्होंने सूर की शैली के अनुकरण पर अपनी भक्ति भावना का प्रकाशन गेय पदों में किया है। इन्होंने कहीं–कहीं उर्दू छन्दों को भी अपनाने का प्रयास किया है पर इन्हें इस दिशा में विशेष सफलता नहीं मिल पायी है। इनकी छन्द–योजना समयानुसार सफल है और कवि के पिंगलज्ञान की समर्थक है।

11. **भाषा** : भारतेन्दु आधुनिक साहित्यिक हिन्दी भाषा के निर्माता थे। उनके समय में जो शब्द जिस रूप में जनता में प्रचलित थे उसे उसी रूप में उन्होंने स्वीकार कर लिया। हिन्दी को व्यावहारिक रूप देने के लिए इन्होंने संस्कृत, अरबी फ़ारसी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के शब्दों को ग्रहण किया। इन्होने खड़ी बोली का परिमार्जन किया, कर्ण–कटु, शब्दों को मधुर बनाया और हिन्दी के सांचे में ठीक प्रकार से डाला। यद्यपि इन्हें भाषा सम्बन्धी जटिलताओं एवं राजकीय कर्मचारियों की

अनेक अड़चनों का सामना करना पड़ा पर इन्होंने अपने बुद्धि बल और परिश्रम से इन सब पर विजय प्राप्त की और हिन्दी को लोक भाषा बना दिया। इन्होंने खड़ी बोली के साथ–साथ ब्रज भाषा को भी सुसंस्कृत किया। इनके समय ब्रज काव्य की भाषा थी पर वह जटिल हो गई थी। इन्होंने उसे व्यावहारिकता प्रदान करके लोकरंजन की भाषा बनाया। इन्होंने गद्य और पद्य साहित्य के दोनों क्षेत्रों की भाषा को समुन्नत, ग्रहणशील और प्रसाद गुण युक्त बना कर अन्य भाषाओं पर हिन्दी का सिक्का जमा दिया। वस्तुतः हिन्दी के लिए उनकी सेवाएं महान् हैं और वह आधुनिक युग के साहित्यकारों में सर्वप्रथम और सर्वोच्च है।

खण्ड ख

अंधेर नगरी : कथा–सार

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा रचित 'अंधेर नगरी' अत्यन्त संक्षिप्त कलेवर का हास्य–व्यंग्य से परिपूर्ण एक नाटक है जिसमें सामाजिक और राजनीतिक परिवेश पर तीखे कटाक्ष किए गए हैं। ये कटाक्ष समय के साथ पुराने नहीं पड़े बल्कि आज की परिस्थितियों में भी अनुकूल और सटीक हैं। इसके कथानक में कोई विशेष गम्भीरता नहीं है। यह एक दृष्टांत के रूप में प्रस्तुत किया गया है लेकिन फिर भी इसके मूल स्वर में मूल्यहीन, अमानवीय और अराजक व्यवस्था प्रणाली को इस प्रकार प्रकट किया गया है कि शासन की अन्ध व्यवस्था सामने आ जाती है। विवेकहीन और मूर्ख राजा अपनी पूरी प्रजा के लिए कष्ट का कारण ही नहीं बनता बल्कि उसके नाश का आधार भी बन जाता है। लेखक ने इस नाटक के आधार पर जन चेतना जगानी चाही है।

'अंधेर नगरी' नाटक की रचना वास्तव में बिहार के किसी रजवाड़े को आधार बनाकर की गई है। लेखक ने इसे एक ही रात में लिखकर पूरा कर दिया था। रजवाड़े का राजा निकम्मा और नशेबाज है जिसे राजकाज और जनता की भलाई के बारे में कुछ भी पता नहीं है। वह न्याय–अन्याय के भेद को भी नहीं समझता। वह मूर्ख विवेकहीन तथा अस्थिर है। परम्परा से प्राप्त धन–दौलत का उपभाग करना ही बस उसे आता है। वह जनता का शोषण करता है और सब को अन्धे की लकड़ी से हांकने का प्रयत्न करता है।

नाटक में कुछ छः अंग हैं जो काफ़ी छोटे आकार के हैं। इनमें गद्य–पद्यात्मकता के मिश्रण से गति प्रदान की गई है।

पहला अंक : एक महन्त जी अपने दो चेलों के साथ राम–भजन करते हुए नगर में प्रवेश करते हैं। उनके शिष्य गोवर्धन दास और नारायण दास हैं। वे भी अपने गुरु के साथ भजन गाने में स्वर मिला रहे हैं। नगर बहुत सुन्दर है और वहां के लोग सम्पन्न प्रतीत होते हैं। महन्त अपने दोनों चेलों को भीख प्राप्त करने के लिए नगर में भेजता है। गोवर्धन दास पश्चिम और नारायण दास पूर्व दिशा की ओर भीख प्राप्त करने के लिए बढ़ते हैं। गोवर्धन दास महन्त जी से आशा भरे स्वर में कहता है कि वह बहुत सी भीख प्राप्त करके लौटेगा लेकिन महन्त जी उसे समझाते हैं कि अधिक लालच नहीं करना चाहिए क्योंकि लालच ही पाप का मूल है और इससे यश और मान दोनों मिट जाते हैं। आदर–सम्मान नहीं रहता और लालची व्यक्ति को नरक के कष्ट प्राप्त करने पड़ते हैं। महन्त जी तो भीख में मात्र अनाज प्राप्त करना चाहते हैं।

दूसरा अंक : लेखक ने दूसरे अंक में बाज़ार का वर्णन किया है जहां तरह–तरह का माल बेचने वाले अपने–अपने ढ़ंग से ग्राहकों को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे हैं। कबाब वाला अपने द्वारा बनाये गए कबाबों की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा करता है। मसालेदार भुने हुए चने बेचने वाला घासी राम गा–गाकर अपने माल को बेचता है। उसकी झोली ही उसकी दुकान है। उसके माल को खरीदने वाले सभी वर्गों के लोग हैं। नारंगी बेचने वाली लोगों को अपने ढंग से माल बेचना चाहती है। वह नींबू, सन्तरा आदि बेचती है। उसका माल टके सेर भाव का है । एक हलवाई जलेबी, गुलाब जामुन, खुरमा, बुंदिया, बरफी , समोसा, लड्डू आदि मिठाइयां टके सेर बेच रहा है। वह टके सेर खाजा बेचता है। उसकी हर मिठाई टके सेर है। एक कुंजड़िन धनिया, मेथी , पालक, चौलाई, बथुआ, कलप्पा, सरसों, बैंगन, आलू आदि सब्ज़ियां टके सेर बेचती हैं। एक मुग़ल अखरोट, पिस्ता, मुनक्का, किशमिश, आलू बुखारा, नाशपाती आदि टके सेर बेचता है और वह मानता है कि भारतीय लोग दुबले–पतले और कमज़ोर हैं जबकि उसके देशवासी शक्तिशाली और सुदृढ़ हैं। चूरन बेचने वाला विशेष लहजे में चूरन बेचना चाहता है। उसके चूरन का सब पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। वह व्यंग्य का सहारा लेकर कहता है कि उसके चूरन के प्रभाव से रिश्वत जल्दी पच जाती है, महाजन दूसरों का धन हज़म कर जाते हैं, पुलिस कर्मी कानून को हज़म कर जाते हैं और अंग्रेज तो सारे देश को ही हज़म कर गए हैं। मछली बेचने वाली टके सेर मछली बेच रही है तो धर्म का ठेकेदार ब्राह्मण धर्म का ही टके सेर के भाव से व्यापार कर रहा है। एक बनिया भी अपना माल बेच रहा है। आटा, दाल, नमक, घी, मसाला, चावल आदि सब सामान टके सेर बेच रहा है। गोवर्धन दास सब लोगों से उनके माल का भाव बार–बार पूछता है और सब का भाव टके सेर जानकर आश्चर्यचकित रह जाता है। उसे उन्हीं से मालूम होता है कि उस नगर

का नाम अंधेर नगरी है और वहां का राजा चोपट्ट है। गोवर्धन दास ने अब तक भीख में सात पैसे प्राप्त किए थे इसलिए वह हलवाई से साढ़े तीन सेर मिठाई खरीद लेता है ताकि वह अपने गुरु के साथ मिल कर उसे खा सके।

तीसरा अंक : भिक्षा–प्राप्ति के पश्चात् महन्त जी, नारायणदास और गोवर्धन दास जंगल में परस्पर मिलते हैं। महन्त जी और नारायण दास तो 'राम भजो' का गायन करते हैं लेकिन गोवर्धन दास 'अंधेर नगरी' से प्रभावित होकर उसी का गायन करता है। महन्त जी गोवर्धन दास की भारी गठरी देखकर पूछते हैं कि उस गठरी में क्या है तो वह बतलाता है कि उसमें साढ़े तीन सेर मिठाई है जो उसने भीख में प्राप्त सात पैसों में टके सेर के हिसाब से खरीदी है। उसके गुरु इस बात पर विश्वास नहीं करते कि मिठाई इतने सस्ते दाम पर मिल सकती है तो चेला उन्हें कहता है––'अंधेर नगरी चोपट्ट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा''। चेले की बात सुनकर गुरु जी उसे सलाह देते हैं कि उस नगरी में रहना उचित नहीं जहां टके सेर भाजी टके सेर खाजा मिलता हो। जहां हर सफेद वस्तु को समान महत्त्व का माना जाता हो वह जगह रहने के लिए उचित नहीं है। कपास और कपूर दोनों ही सफेद हैं लेकिन दोनों के गुणों में बहुत अन्तर हैं जहां गुणी अवगुणी में पहचान नहीं वह जगह खतरे से खाली नहीं है। कौवा और कोयल दोनों ही काले हैं लेकिन दोनों के गुणों में बहुत अन्तर है। लाल रंग कड़वा फल इन्द्रायण और अनार देखने में चाहे एक से हों लेकिन उन्हें पहचानने का विवेक तो मानव में होना चाहिए। जहां इतना सा भी विवेक लोगों में नहीं है वह स्थान रहने योग्य नहीं है चाहे वह कितना भी धन–धान्य और सम्पन्नता से पूर्ण क्यों न हो। ऐसी जगह चाहे हजार मन मिठाई मुफ्त में मिलती हो तो भी वहां नहीं रहना चाहिए। गुरु जी की यह बात गोवर्धन दास को पसन्द नहीं आती क्योंकि उसके वहां सुख ही सुख अनुभव होता है। गुरु जी अपने दूसरे चेले नारायण दास के साथ वहां से उसी क्षण चले जाते हैं लेकिन गोवर्धन दास वहीं रुक जाता है। जाते समय गुरु जी उसे कहते हैं कि यदि कभी कठिनाई आये तो वह उन्हें याद करे ताकि वे उसकी सहायता कर सकें।

चौथा अंक : राजसभा में राजा, मंत्री, नौकर आदि सभी अपने–अपने स्थान पर विराजमान हैं। राजा नशे में हैं और उसका सेवक उसे और अधिक शराब पिलाता है। राजा मूर्ख है और सेवक को अकारण सज़ा देना चाहता है जो मंत्री की सजगता से बच जाता है। मंत्री उसकी जी–हजूरी करने वाला है। दरबार में उपस्थित सभी लोग मूर्ख हैं लेकिन राजा तो सबसे बढ़कर मूर्ख है, वह अविवेकी ओर नीच है, वह बुद्धिहीन और डरपोक है। उसी समय एक व्यक्ति दरबार में यह शिकायत लेकर उपस्थित होता है कि कल्लू बनिया की दीवार गिर जाने से उसकी बकरी उसके नीचे कुचल कर मर गई इसलिए उसे न्याय मिलना चाहिए और अपराधी को दण्ड मिलना चाहिए। राजा अपनी मूर्खता का परिचय देता हुआ दीवार को गिरफ्तार करने का आदेश देता है जो सम्भव नहीं था। इसलिए वह कई लोगों को एक–एक कर दरबार में बुलाता है। बनिया, कारीगर, चूना बनाने वाला, भिश्ती, कसाई, गड़रिया और कोतवाल को राजा के सामने पेश किया जाता है जो सभी अपना दोष दूसरों के माथे मढ़ते चले जाते हैं और स्वयं को निर्दोष सिद्ध करते जाते हैं। मूर्ख राजा अपनी मूर्खता का परिचय देता हुआ नगर कोतवाल को फांसी की सजा सुना देता है और स्वयं मंत्री का सहारा लेकर वहां से चला जाता है। वह न तो शिकायत करने वाले की समस्या को समझता है, न कोई न्याय करता है, न अपराधी को दण्डित करता है और एक निरपराधी की मौत की सज़ा सुना देता है।

पाँचवां अंक : गोवर्धन दास टके सेर के भाव मिठाई खा–खाकर बहुत मोटा हो गया हैं वह आनन्द से जीवन व्यतीत करता हुआ अपने में मस्त है। खाना–पीना, सोना और गाना ही उसका काम है। वह गाना गाते हुए उस राज्य की अव्यवस्था का वर्णन करता है कि वहां ऊंचे–नीचे सभी लोग एक ही तरह के हैं। सब लोग विवेक शून्य हैं, वे बुद्धि से रहित हैं। पापी और पुण्यात्मा में कोई अन्तर नहीं है। पाप–पुण्य में वहां कोई भेद नहीं है। मूर्ख राजा के प्रति लोगों में अन्ध भक्ति है। वह जो कुछ भी करता है वह ठीक ही माना जाता है। राजा ही ईश्वर का अवतार है । उन लोगों का मानना है कि राजा अन्याय कर ही नहीं सकता। सारे देश में अन्याय का बोलबाला है, राजा के कर्मचारी बुरे आचरण वाले हैं, वे तड़क–भड़क से रहते हैं। वे सामान्य जनता पर मनचाहा अत्याचार करते हैं लेकिन राजा उन्हें कुछ नहीं कहता और प्रजा कुछ कह नहीं सकती। वे मनमानी करते हैं कि जिस कारण सारे राज्य में आतंक सा छाया रहता है। जाति–पाति का कोई महत्त्व नहीं है और गाय–बकरी को एक ही समान माना जाता है। जो सच बोलता है उसे जूते खाने पड़ते हैं और जो झूठा है वह पदवियां प्राप्त करता है। सब को एक ही लाठी से हाँका जाता है। विवेकहीनता यहाँ तक पहुंच गई है कि वेश्या और पत्नी को समान माना जाता है, उनमें कोई अन्तर नहीं है। सर्वत्र धोखेबाज और कपटी लोगों का ही वर्चस्व बना हुआ है। इतना होने पर भी गोवर्धन दास प्रसन्न है क्योंकि उसे खूब खाने को मिलता है। उसे लगता है कि उसने गुरु जी के साथ न जाकर बहुत अच्छा ही किया। तभी चार सिपाही उसे आकर पकड़ लेते हैं और कहते है कि उसे फांसी के फंदे पर लटकाया जाएगा। वे उसे बतलाते हैं कि कोतवाल को फांसी की सज़ा दी गई थी लेकिन फंदा बड़े आकार का

बन गया है और उसमें कोतवाल की गर्दन पूरी नहीं आती क्योंकि वह शरीर का पतला है। तुम मोटे हो इसलिए तुम्हारी गर्दन उसमें पूरी आ जाएगी और वैसे भी इस राज्य में साधू–महात्माओं की ही सबसे बड़ी दयनीय अवस्था है। राजा के न्याय के डर से नगर में कोई मोटा होता ही नहीं इसलिए फांसी के फंदे में उसी की ही गर्दन डाली जाएगी। स्वयं को असहाय पाकर गोवर्धन दास अपने गुरु जी को सहायता के लिए चिल्लाता है, रोता है, विलाप करता है, लेकिन चारों सिपाही उसे बलपूर्वक पकड़ कर ले जाते हैं।

छठा अंक : सिपाही गोवर्धन दास को पकड़कर श्मशान ले जाते हैं ताकि उसे फाँसी पर लटकाया जा सके। वह रोता–चिल्लाता है, विनय–अनुनय करता है लेकिन सिपाही उसे नहीं छोड़ते । तभी उसके गुरु जी अपने चेले नारायणदास के साथ वहां आते हैं और सारी बात सुनकर उसके कान में धीमे स्वर में कुछ समझाते हैं। वह उसे बतलाते हैं कि इस शुभ घड़ी में जो फांसी चढ़ेगा वह सीधा स्वर्ग जाएगा इसलिए गुरु और चेला दोनों ही उस घड़ी मरने के लिए जिद्द करने लगते हैं चेला अपने गुरु से कहता है कि वह तो सिद्ध हैं इसलिए उन्हें गति–अगति से कोई मतलब नहीं। गुरु–चेले के इस विवाद से सिपाही हैरान होते हैं कि ये दोनों मरने के लिए विवाद क्यों कर रहे हैं । इतने में राजा, मंत्री और कोतवाल वहां आते हैं और गुरु से यह जानकर कि यह शुभ घड़ी है और जो कोई इस घड़ी मरेगा वह सीधा स्वर्ग जाएगा। कोतवाल और मंत्री स्वर्ग प्राप्त करने की कामना से फांसी के फंदे पर चढ़ने की जिद्द करते हैं लेकिन मूर्ख राजा यह कहते हुए फांसी के फंदे तक स्वयं पहुंच जाता है कि राजा के जीवित होते हुए पहले फांसी कौन चढ़ सकता है ?

निस्संदेह 'अंधेर नगरी' में लेखक ने विवेक शून्य राजा के माध्यम से तत्कालीन परिस्थितियों को ही व्यंजित नहीं किया बल्कि उनसे प्रभावित शासक, प्रजा और सामान्य आदमी की मूल्यहीन चेतना को यथार्थ रूप में प्रकट कर दिया है। हास्य–व्यंग्य के आधार पर अत्यन्त गम्भीर भावों की वाणी प्रदान करने में भारतेन्दु पूर्ण रूप से सफल रहे हैं।

खण्ड ग

समीक्षात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 'अंधेर नगरी' नाटक की तात्विक समीक्षा कीजिए ।

उत्तर – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के द्वारा रचित 'अंधेर नगरी' छोटे से आकार का एक नाटक है जिसकी रचना इन्होंने एक रात में ही कर दी थी। बिहारी के किसी रजवाड़े को आधार बनाकर लिखे गए इस नाटक को प्रहसन या हास्य नाटक माना जा सकता है लेकिन अंग्रेज सरकार की नीतियों और किसी मूर्ख राजा को आधार बनाने के कारण इसमें गूढ़ार्थ व्यंग्य के माध्यम से उन पर तीखा प्रहार किया गया है। नाटक में चित्रित मूर्ख राजा वास्तव में उन सभी शराबी, विवेकहीन और लम्पट सामन्तों और रजवाड़ों के मुखियाओं का प्रतिनिधित्व करता है जो उस समय देश के विभिन्न हिस्सों में जनता के पैसे पर ऐशो–आराम का जीवन व्यतीत करते थे और इसी जनता पर न्याय के नाम पर अन्याय करते थे। नाटक के तत्वों के आधार पर इस नाटक की समीक्षा इस प्रकार की जा सकती है––

1. **कथा वस्तु** : किसी नाटक में कथा वस्तु ही वह मूल आधार है जिस पर सारी कथा की विशेषताओं और उद्देश्य का ताना–बाना बुना जाता है। अन्धेर नगरी की कथा–वस्तु कल्पना को सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों पर आश्रित कर के प्रस्तुत किया गया है। इसमें अंग्रेजी शासन काल की दुर्व्यवस्था और तत्कालीन समाज की दीन–हीन स्थिति को प्रकट किया है। यह एक प्रहसन है जिस का कथानक अंधेर नगरी : कथा–सार सीधा–सादा हैं इसमें कहीं कोई वक्रता नहीं है। इस नाटक का विभाजन छः अंकों में हुआ है जिन्हें लेखक के बाह्य प्रान्त, बाजार, जंगल, राजसभा, अरण्य और श्मशान नाम से व्यंजित किया है। ये सारे के सारे अंक एक दूसरे से इस प्रकार सम्बन्धित हैं कि वे एक लड़ी में पिरोये गए मनकों की भान्ति प्रतीत होते हैं। कथा में कहीं कोई अवरोध नहीं है। कथा का प्रवाह धीरे–धीरे आगे बढ़ता है और चरम उत्कर्ष की सृष्टि करता है। 'बाह्य प्रान्त' में महन्त जी अपने दो चेलों–नारायण दास और गोवर्धन दास के साथ राम भजन करते हुए मंच पर प्रवेश करते हैं। महन्त जी अपने चेलों को पूर्व और पश्चिम दिशाओं में जाने के लिए कहते हैं ताकि वे वहां से भीख ला सके। गोवर्धनदास चौपट्ट राजा की अंधेर नगरी में पहुंचता है जहाँ बाजार में तरह–तरह की वस्तुएं बिक रही हैं और सभी का मूल्य टके सेर है। उसे आश्चर्य होता है। गुरु के समझाने के बाद भी वह सदा के लिए वहीं रहना चाहता है ताकि वह टके सेर के भाव से बहुत अच्छा खा सकें चौपट्ट राजा एक बकरी के दीवार के नीचे दब कर मर जाने के अपराध में निरपराधी कोतवाल को फांसी की सज़ा सुना देता है लेकिन उसकी गर्दन में फॉसी का बड़े आकार का फंदा पूरा नहीं आता जिस कारण गोवर्धन की मोटी गर्दन उसमें डाल कर उसे लटका देने का निर्णय किया जाता है लेकिन ठीक समय पर गुरु जी उसे बचा लेते हैं और चौपट्ट राजा अपनी मूर्खता से स्वयं फांसी पर चढ़ जाता है। लेखक ने नियोजित ढंग से कथा को गति प्रदान की है लेकिन इस नाटक के केन्द्र बिन्दु दो ही हैं। बाजार का दृश्य और राजसभा के द्वारा लेखक ने नगर की अन्धी और अविवेकपूर्ण व्यवस्था का परिचय दिया है। जिसका समापन राजा की फांसी के साथ होता है। नाटक के आरम्भ में जिस हास्य की सृष्टि आरम्भ होती है वह निरन्तर कथा प्रवाह के साथ बढ़ती ही जाती है और नाटक के अन्तिम दृश्य में दर्शक या पाठक खुलकर जोर से हंस पड़ता है। नाटक का कथानक तारतम्यता से बंधा हुआ है। इसमें जिज्ञासा तत्त्व प्रधान है जो आरम्भ से अन्त तक पाठक को नाटक के साथ बांधे रखता है। जब दीवार के नीचे बकरी के दब कर मर जाने का दृश्य आता है और उसका दोष एक से दूसरे और दूसरे से तीसरे के सिर मड़ा जाता है तो पाठक

बिल्कुल भी नहीं सोच पाता कि इसके कारण अन्त में फाँसी का फंदा स्वयं राजा के अपने ही गले में पड़ जाएगा। अन्धेर नगरी का अन्धा न्याय पाठकों में जिज्ञासा की सृष्टि ही नहीं करता बल्कि निरन्तर उसे बढ़ाता जाता है। नाटक के सारे अंकों में सुसम्बन्धता और एकता निरन्तर बनी रही हैं कथानक में कहीं भी असम्बन्धता का तत्त्व नहीं है। सभी घटनाएं क्रमबद्ध हैं जो कथानक को निरन्तर गतिमान रखती हैं। हर दृश्य एक दूसरे से जुड़ कर कथा को प्रवाह देता है। महन्त जी के मंच पर आने से लेकर चौपट्ट राजा की फांसी तक की सारी कथा में प्रवाह और गतिशीलता है, उनमें तारतम्यता है। महन्त जी, गोवर्धन दास और चौपट्ट राजा कुछ सहायक पात्रों की सहायता से कथा में सुसम्बन्धता और एकता बनाये रखने सहायक सिद्ध हुए हैं।

अन्धेर नगरी के कथानक में सर्वत्र गतिशीलता विद्यमान है। कहीं भी कथा के प्रवाह में मन्द वेग दिखाई नहीं देता। घटनाएं एक के बाद एक तेज़ी से पाठक/दर्शक के सामने से गुजरती चली जाती है। जिस कारण उसका पूरा ध्यान उनमें लगा रहता है इसी कारण इसमें रोचकता का तत्त्व विद्यमान है।

अन्धेर नगरी की कथावस्तु अत्यन्त रोचक, प्रभावशाली, जिज्ञासापूर्ण, हास्य और कौतूहल से युक्त है। इस के माध्यम से लेखक के तत्कालीन परिप्रेक्ष्य को प्रस्तुत किया है तथा इसमें कथावस्तु की समस्त अवस्थाओं का पूरी तरह निर्वाह हुआ है।

2. **पात्र** : नाटक की कथावस्तु को गति प्रदान करने वाले पात्र ही प्रमुख होते हैं। इसलिए उनकी योजना कथावस्तु के अनुसार ही होती है। अंधेर नगरी का आकार बहुत छोटा है इसलिए इसमें पात्रों के चारित्रिक विकास का लेखक के पास बहुत बड़ा अवसर तो नहीं था पर फिर भी तीन प्रमुख पात्र––महन्त जी , गोवर्धन दास और चौपट्ट राजा अपने–अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करने में सफल रहे हैं। वैसे बाज़ार दृश्य में कबाब, घासीराम, नारंगी वाली, हलवाई, कुंजड़िन , मुगल पाचक वाला, मछली वाली, जात वाला (ब्राह्मण), बनिया आदि अनेक पात्र दिखायी देते हैं लेकिन अपनी एक–एक बात कह कर मंच से दूर हो जाते हैं जिस कारण उनके चारित्रिक विकास को ठीक प्रकार से प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। कथानक में उनके केवल नाम और कार्यों की गणना की गई है। इनके माध्यम में लेखक ने उद्देश्य पूर्ति के लिए करारे व्यंग्य तो अवश्य किए हैं लेकिन पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का प्रकट नहीं कर पाया और न ही ऐसा करना उसका उद्देश्य था।

नाटक में महन्त जी और गोवर्धनदास वर्गपात्र हैं क्योंकि उनका इतना चारित्रिक विकास अवश्य दिखाया गया है कि उनकी प्रमुख विशेषताएं पाठकों, दर्शकों को दिखायी दे सकें। ये दोनों पात्र अत्यन्त यथार्थ और स्वाभाविक है। महन्त जी गम्भीर, रामभक्त, यथार्थ में विश्वास करने वाले, विवेकशील और चिन्तक हैं। वह कदापि लालची नहीं हैं वह जीवन में उतना ही चाहता है जो जीवन के लिए आवश्यक है। उन्हें संतों की तरह भक्ति और नीति सम्बन्धी अनेक पद दोहे, सूक्तियां आदि याद हैं और समय–समय पर वह उन्हें प्रयुक्त करता है। वह सजग ओर सुचेत है इसीलिए वह अपने चेले गोवर्धन दास के गले को फांसी के फंदे से बचा पाया था। वह मनोविज्ञान का ज्ञाता है। गोवर्धन दास पेटू, लालची और आत्मकेन्द्रित है। वह जीवन के सुखों को पाना चाहता है। वह आज के साधु–संतों के समान भगवे कपड़े पहन कर आराम परस्ती का जीवन जीना चाहता है। भक्ति करना उसे अच्छा नहीं लगता वह तो केवल मिठाई खा–खा कर मोटा होना चाहता है। उसे केवल अपनी चिन्ता रहती है। वह दूसरों की परवाह नहीं करता। वह डरपोक स्वभाव का है इसीलिए सिपाहियों के द्वारा पकड़े जाने पर वह रोता–चिल्लाता है, गिड़गिड़ाता है, जीवन की भीख मांगता है । चोपट्ट राजा राजवर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जो मूर्ख होकर सामान्य लोगों के पूजनीय और बुद्धिमान बना रहता है। वह अविवेकी, नशेबाज, घमण्डी और लालची है।

3. **संवाद** : नाटक की सफलता उसके छोटे–छोटे संवादों पर निर्भर करती है। उनमें नाटकीयता का समावेश

अवश्य होना चाहिए। लम्बे संवाद पाठक दर्शक को कभी अच्छे नहीं लगते क्योंकि एक ही पात्र को निरन्तर बोलते देखकर मन में ऊब उत्पन्न होती है। वे संवाद कम और भाषण अधिक लगने लगता है। अंधेर नगरी में संवाद छोटे–छोटे और प्रभावशाली हैं। संवाद बोलने वाले सभी पात्र नपा–तुला और सटीक बोलते हैं। कहीं–कहीं तो एक शब्दात्मक वाक्यों का भी प्रयोग किया गया है : जैसे––

गोवर्धन दास	:	क्यों भाई बनिये। आटा कितने सेर ?
बनिया	:	टके सेर।
गोवर्धन दास	:	और चावल ?
बनिया	:	टके सेर !
गोवर्धन दास	:	और चीनी ?
बनिया	:	टके सेर ।
गोवर्धन दास	:	और घी ?
बनिया	:	टके सेर।
गोवर्धन दास	:	सब टके सेर। सचमुच
बनिया	:	हाँ महाराज, क्या झूठ बोलूंगा ?

लेखक ने पात्रों की स्थिति के अनुसार संवाद–योजना की है। महन्त जी कम बोलते हैं लेकिन जितना बोलते हैं उतना ही प्रभावशाली और गम्भीर शैली में बोलते हैं। उनके संवादों में सूक्तियाँ और नीति–कथनों का प्रयोग अधिक दिखायी देता हैं चौपट्ट राजा के द्वारा बोले गए संवादों से मूर्खता झलकती है। बाज़ार में तरह–तरह का सामान बेचने वालों के संवाद नहीं है बल्कि पद्यात्मक और गद्यात्मक वक्तव्य हैं। निश्चित रूप से इन में लम्बाई है लेकिन ये बुरे और बोझिल प्रतीत नहीं होते क्योंकि इनमें यथार्थ विद्यमान है तथा इनके माध्यम से तत्कालीन परिस्थितियां व्यंग्य रूप में प्रकट की गई हैं। छोटे से कलेवर के नाटक में गीतों की संख्या कुछ अधिक है लेकिन भाषा की सरलता और विषय की अनुरूपता के कारण वे चुभते नहीं हैं। वे कथानक को गति देने में सहायक सिद्ध हुए हैं।

4. **भाषा–शैली** : भारतेन्दु ने 'अन्धेर नगरी' में ब्रजभाषा और खड़ी बोली के सम्मिश्रण से कथा को प्रवाह प्रदान किया है। उन्होंने संस्कृत की नाटक शैली को आधार बना कर इसकी रचना की है लेकिन इस परम्परा का कठोरता से पालन नहीं किया है। उन्होंने जहां–तहां उर्दू की शब्दावली का प्रयोग भी किया है जैसे हाकिम, कानून रैयत, आशना, दरबार, हुकम, बन्दे,कसूर, इन्तजाम, बरखास्त, दोस्त आदि। तद्भव शब्दावली का प्रयोग कुछ अधिक दिखाई देता है। ग्रामीण तथा अनपढ़ जनता को स्वाभाविक रूप से प्रकट करने के लिए ऐसी शब्दावली का प्रचुर प्रयोग किया गया है जो ऐसे लोग भावों को प्रकट करने के लिए प्रयुक्त करते हैं, जैसे – बोई, हई, जैसे करें, लकलक, बोदा, टिकस, चामना, साहत, मुटाना आदि। मुहावरों तथा लोकोक्तियों का सहज–स्वाभाविक प्रयोग दिखाई देता है, जैसे––

(क) खाय सो होंठ चाटै, खायो सो जीभ काटै।

(ख) मैं तो पिय के रंग न रंगी।

(ग) मैं तो भूली ले कर संगी।

(घ) दोनों हाथ लो–नहीं पीछे हाथ ही मलते रहोगे।

(ङ) अमारा ऐसा मुल्क जिसमें अंग्रेज़ का भी दांत कट्टा ओ गया।

(च) कीया दाँत सभी का खट्टा।

(छ) जिन के पेट पचै नहिं बात।

(ज) क्यों बेकसूर का प्राण मारते हो ?

(झ) भौं चढ़ाकर सिपाहियों से

नाटककार ने पात्रों के आधार पर भाषा का प्रयोग किया है। महन्त और उसके चेले साधुओं जैसी भाषा का ही प्रयोग करते हैं और मूर्ख राजा मूर्खों जैसी भाषा ही प्रयुक्त करता है। भाषा की सरलता और सरसता के कारण ही सभी पात्रों के चरित्र अपेक्षाकृत सरलता से प्रकट हो सके हैं।

5. **देशकाल और वातावरण** : भारतेन्दु ने अंधेर नगरी से अंग्रेज़ी शासन के समय की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थितियों का वर्णन किया है। उन्होंने साहित्य को केवल मनोरंजन का साधन न मानकर इस जागरण का आधार बनाना चाहा था। अंग्रेज़ी राज्य की नीतियों के कारण लेखकों के पास इतनी सुविधा नहीं थी कि वे स्पष्ट उन्हें इंगित कर के साहित्य लिख सकें इसलिए उन्हें लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता का सहारा लेकर इस कार्य को किया था। उन्होंने अपने युग की विभिन्न विसंगतियों को दूसरे आधारों पर चित्रित करना पड़ा था। उन्होंने तत्कालीन समाज में धर्म के क्षेत्र में व्याप्त पोंगापन्थी तथा अनेक प्रकार के आडम्बरों का समाज के समक्ष पर्दाफाश करना चाहा था। पाठक और दर्शक को उन्होंने युग चित्रण के द्वारा यथार्थ का दर्शन कराया था। उस समय जाति–पांति प्रथा का बोलबाला था। एक जाति की अनेक उपजातियां हो जाती थी और उनके आगे अनेक शाखाएं बन जाती थी–'ऐसी जात हलवाई जिसके छत्तीस कौम है भाई' ब्राह्मण पैसे के नाम पर ध र्म से खिलवाड़ करते थे। वे अपने उच्च आदर्शों और जीवन मूल्यों को भूल चुके थें। वे मूल्यहीन समाज का प्रतिनिधित्व कर रहे थे और पैसे के लालच में मान–प्रतिष्ठा, सिद्धान्त, आदर्श आदि को बेच रहे थें उस समय महाजन बेइमान बन चुके थे। व्यापार–व्यवसाय के नाम पर वे जनता का शोषण करने लगे थे। बेइमानी से वे गरीब लोगों का पैसा लूट लेते थे। उस समय वेश्यावृत्ति समाज की जड़ेंखोखला कर रही थी और बिगड़े हुए युवक नारियों की ओर आँखें गड़ाये रहते थे। तत्कालीन पत्रकार और सम्पादक भी अपने काम के प्रति पूर्ण रूप से सजग नहीं थे। वे अच्छे–बुरे के बीच भेद समझे बिना अपने अखबार के पृष्ठ भरना चाहते थे। उस समय के साधु ईश्वर नाम की अपेक्षा मोह–माया में रुचि लेते थे। वे अच्छा खाना .चाहते थे लेकिन ईश्वर का नाम नहीं लेना चाहते थे। वे अंधेर नगरी के वैभव को देख अच्छी शिक्षा की कामना तो करते हैं लेकिन अच्छा आचरण नहीं रखना चाहते। उस समय का समाज अन्ध विश्वास से परिपूर्ण था। महन्त जी के यह कहने पर कि उस घड़ी जो मरेगा वह सीधा बैकुण्ठ जाएगा––फांसी के फंदे पर चढ़ने के लिए कोतवाल, मंत्री, राजा आदि सब झट तैयार हो जाते हैं।

6. **अभिनेता** : अंधेर नगरी रंगमंच को ध्यान में रखकर लिखा गया नाटक है जिसका कथानक पात्रों के घात–प्रतिघातों की सहायता से गति प्राप्त करता है। नाटक का कथानक अति सरल और छोटा है। इसके सारे छः दृश्य बहुत छोटे आकार के हैं इसलिए वे पाठक पर किसी भी प्रकार बोझिल नहीं बनते। इनके द्वारा रोचकता ओर जिज्ञासा सर्वत्र बनी रही है। सारी कथा एक सूत्र में बंधकर आगे बढ़ती हुई प्रतीत होती है। नाटक के दृश्यों की साज सज्जा बहुत सरल हैं। जिन्हें कुछ ही मिनटों में तैयार किया जा सकता है। कथावस्तु यथार्थ पर टिका

हुआ है। वह अंग्रेजी शासन की व्यंग्य के माध्यम से आलोचना करता हुआ समाज को बहुत कुछ बता जाता है। नाटक के माध्यम से पाठक/दर्शक तत्कालीन समाज में व्याप्त आडम्बर, विवेकहीनता, आर्थिक शोषण ,न्याय व्यवस्था, भ्रष्टाचार आदि मंच पर अपने सामने होता देखकर ऐसा अनुभव करता है जैसे ये सब उसके जीवन के आसपास से ही सम्बन्धित हैं। छोटे–छोटे ओर सटीक संवाद पाठक और दर्शक को अपने साथ बांधकर रख सकने में सक्षम हैं। पूरे नाटक में कहीं कोई ऐसा दृश्य नहीं है जिसे रंगमंच के लिए वर्जित माना गया हो। फांसी के दण्ड की व्यवस्था तो अवश्य की गई है लेकिन उसका संकेत भर है। लेखक ने स्थान–स्थान पर रंग संकेत दिए हैं जिससे नाटक के निर्देशक को किसी प्रकार की कठिनाई अनुभव नहीं होती। नाटक की भाषा–शैली बहुत सरल और सीधी है जो पात्रों की स्थिति और व्यक्तित्व के अनुकूल है। अभिनेयता की दृष्टि से यह पूर्ण रूप से सफल नाटक है।

7. **उद्देश्य :** भारतेन्दु ने 'अंधेर नगरी' नाटक की रचना विशेष उद्देश्यों को अपने मन में रखकर की थी। बिहार के किसी रजवाड़े को आधार बनाकर इसकी रचना तो अवश्य की गई थी लेकिन लेखक की दृष्टि तत्कालीन भारत की ओर लगी हुई थी। वह वास्तव में भरत की दुर्दशा का वर्णन करना चाहते थे। इसीलिए वह तत्कालीन शासकों पर व्यंग्य बाण बरसाते हैं। वह मानते हैं कि भारत की दुर्दशा का कारण अंग्रेज़ ही हैं। उस समय देश के अधिकांश लोग अंग्रेजों से संतुष्ट नहीं थे। जनता में राष्ट्रीय भावना जागृत होने लगी थी। वह अंग्रेजी राज की नीतियों का विरोध करना चाहते थे। भारतेन्दु ने अपने नाटक के माध्यम से नवचेतना और नवजागरण की भावना उत्पन्न की थी। उन्होंने पुलिस, कानून , बेइमानी, भ्रष्टाचार, शोषण, क्रूरता आदि के पोल खोलते हुए उन्हें समाज के सामने प्रकट कर दिया था। चने वाला, चूरन वाला और गोवर्धनदास के माध्यम से अंग्रेज सरकार की नीतियों का स्पष्ट विरोध किया गया है। अंग्रेज हमारे देश का आर्थिक शोषण करते थे––**''चना हाकिम सब जो खाते। सब पर दूना टिकस लगाते।''** सरकार के विभिन्न कार्यालयों, कचहरियों, पुलिस विभाग आदि के विषय में यही कहा गया है कि वे लूट के अड्डे है, रिश्वत लेने के स्थान है। वहां झूठे कानूनों का सहारा लेकर झूठ को बढ़ावा दिया जाता है। सांस्कृतिक और सामाजिक चेतना के लिए उन्होंने विभिन्न पाखण्डों, आडम्बरों, अंधविश्वासों रूढ़ियों और परम्पराओं को प्रकट करने हेतु वाणी प्रदान की है। भारतेन्दु ने अपने लघु हास्य नाटक के माध्यम से केवल हास्य की सृष्टि ही अनेक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रयत्न भी किया है। वास्तव में यह यथार्थ –बोध कराने वाला सफल नाटक है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के द्वारा रचित अन्धेर नगरी नाटकीयता तत्त्वों की दृष्टि से एक सफल रचना है।

प्रश्न 2 'अंधेर नगरी' का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा रचित 'अंधेर नगरी' एक लघु हास्य नाटक है जिसके द्वारा एक नहीं अपितु अनेक उद्देश्य प्रकट किए गए हैं । यह युग का बोध कराने के साथ–साथ लोगों की मानसिकता को प्रकट करने का कार्य भी करता है। लेखक ने अपने अन्य नाटकों 'भारत दुर्दशा', 'भारत जननी', वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' की तरह इसमें भी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक विकृतियों को प्रकट किया है। उसके लिए साहित्य मात्र मनोरंजन का कारक नहीं है बल्कि यह जनजागरण का साधन हैं । यह जनता को कर्त्तव्य–बोध की ओर प्रवृत्त करता है, उसे समाज–सुधार की दिशा दिखाता है तथा दायित्व का अहसास करता है। इसीलिए भारतेन्दु को **नई चेतना जगाने वाला वैतालिक** माना जाता है। 'अंधेर नगरी' में प्रमुख रूप से जिन उद्देश्यों को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है उन्हें निम्नलिखित आधारों पर स्थापित किया जा सकता है––

1. **सामाजिक विकृति–चित्रण :** भारतेन्दु का इस लघु आकार के प्रहसन में अनेक सामाजिक कुरीतियों और विकृतियों को पाठक/दर्शक के समक्ष लाने का प्रयत्न किया गया है। चूंकि रचना का आकार

बहुत छोटा है इसलिए उन्हें विस्तार देने का तो अवसर ही नहीं था लेकिन उनकी ओर संकेत अवश्य किया गया है। उस समाज में छुआछात और जातिवाद का बोलबाला था। जातिप्रथा सारे समाज को खोखला कर रही थी। जातियां छोटी–छोटी उपजातियों में बदलने लगी थी जिस कारण हिन्दू समाज कमजोर पड़ने लगा था– **ऐसी जात हलवाई जिस के छत्तीस कौम है भाई। जैसे कलकत्ते के विलसन मन्दिर में मितरिए वैसे अंधेर नगरी के हम।** ब्राह्मण वर्ग के लोग धर्म के नाम पर धन बटोर रहे थे। उनके लिए जाति–पांति आदि सब बिकाऊ सामान है––**जात लें जात, टके सेर जात। एक टका दो। हम अभी अपनी जात बेचते हैं। टके के वास्ते कहां वैसी व्यवस्था दें। टके के वास्ते झूठ को सच करें। टके के वास्ते ब्राह्मण से मुसलमान, टके वास्ते हिन्दू में क्रिस्तान। टके के वास्ते धर्म और प्रतिष्ठा दोनों बेचें, टके के वास्ते झूठी गवाही दें।**

ब्राह्मण वर्ग शिक्षा और धर्म के लिए काम न करके भीख मांगते हैं और उन्हें ऐसा करते हुए कोई शर्म–लाज नहीं आती। चौपट्ट राजा की अंधेर नगरी को देखकर महन्त जी अपने चेलों को भीख मांगने की प्रेरणा देते हैं न कि समाज और जाति के लिए सार्थक कार्य करने की।

2. **नारी भावना** : भारतेन्दु ने अपने नाटक के माध्यम से तत्कालीन समाज में वेश्यावृत्ति के बोल–बाले की ओर संकेत किया है। तब उच्च और मध्यम वर्ग के लिए सामान्य व्यवहार माना जाता होगा जो न जाने कितने घरों को नष्टकर रहा होगा। नारी के लिए समाज में कोई अच्छा स्थान नहीं था।

वेश्या जोरु एक समान।

बकरी गऊ एक करि जाना।।

घासी राम 'चने जोर गरम' बेचता हुआ उस समय की प्रसिद्ध वेश्याओं के नाम बड़ी सहजता से लेता, जैसे कोई बहुत अच्छा काम कर रहा हो––

चना खायै तोकी, मैना।

बोले अच्छा बना चबैना।।

चना खाय गफूस मुन्नी।

बोलैं और नहीं कुछ सुन्नी।

वैसे तो बनारस नगरी पवित्र मानी जाती रही है लेकिन लगता है कि वहां नारी का विशेष सम्मान न रहा हो। वहां की दालमण्डी वेश्याओं का अड्डा थी––

चूरन चला दाल की मंडी। इसको खायेंगी सब रंडी।

बाज़ार में जगह–जगह युवक–युवतियों पर बुरी दृष्टि डालते थे। भोली–भाली गरीब युवतियों पर पैसे और शक्ति का जाल डालने वाले युवकों की कोई कमी नहीं थी। कुछ युवतियाँ भी तरह–तरह से उन्हें उलझाने का प्रयत्न करती रहती थीं––

मछरिया एक टके कै बिकाय।

लाख टका कै वाला जोवन, गाहक सब ललचाय।।

नैन मछरिया रूप जाल में, देखत ही फंसि जाय।।

बिनु पानी मछरी सो बिरहिया, मिलै बिना अकुलाय।।

इतना अवश्य है कि तत्कालीन समाज में नारी भी पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करती थी। वह भी बाज़ार में सामान बेचती थी। सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से उन पर किसी प्रकार का कोई बन्धन नहीं था।

3. **अन्ध विश्वास चित्रण** : तत्कालीन समाज में अन्धविश्वासों का बोलबाला थां राजा, मंत्री, कोतवाल आदि सब अंध विश्वासी थे। वे तरह–तरह की कुरीतियों में विश्वास करते थे। नाटक के अन्तिम अंक चौपट्ट राजा के मूर्खता भरे आदेश से जब गोवर्धनदास को फांसी के फंदे पर लटकाया ही जाने वाला था कि महन्त जी ने उन सबके अन्धविश्वास का लाभ उठाकर राजा को स्वेच्छा से फांसी के फंदे पर लटकने के लिए प्रेरित कर दिया था। एक विशेष मुहूर्त में मृत्यु प्राप्त करने से बैकुण्ठ की प्राप्ति का अन्धविश्वास उनके मन में बैठा हुआ था।

4. **प्रशासन का दुश्चक्र चित्रण** : तत्कालीन समाज में अधिकारी सदा लूटमार मचाये रहते थे। वे जनता को अकारण परेशान करते थे। वे रिश्वत खाते थे––

चूरन अमले सब जो खावै।

दूनी रिश्वत तुरत पचावैं।

5. **सामाजिक मूल्यों के हनन का चित्रण** : तत्कालीन अंग्रेज़ी शासन काल में देश में युगों से स्वीकार किए जाने वाले सामाजिक मूल्य तेज़ी से नष्ट हुए थे। तब पाप–पुण्य, सद्–असद्, सदाचार–दुराचार और अपराधी–निरपराधी में कोई अन्तर नहीं रहा था क्योंकि शासन भ्रष्टाचारी था और वह सबको एक ही लाठी से हांकना चाहता था––

नीच ऊँच सब एकहि ऐसे।

जैसे भंडुए पण्डित तैसे।।

कुल मरजाद न मान बड़ाई ।

सबै एक से लोग–लुगाई।

जिस राज्य में वेश्या और पत्नी का एक ही स्तर माना जाए उसके सामाजिक मूल्य की महज कल्पना की जा सकती है। सत्य बोलने वाले को दुत्कारा जाता है और झूठ बोलने वाले को ऊँचा उठाया जाता है। मनुष्य की करनी और कथनी में अन्तर है। बाहर से वह सभ्य तो भीतर से क्रूर और अत्याचारी है। सच बोलने वाला व्यक्ति जूते खाता है और झूठा तरह–तरह से समाज में सम्मानित होता है। लोगों में विवेक पूरी तरह से समाप्त हो गया था––

सेत सेत सब एक के , जहां कपूर कपास।

ऐसे देस कुदेस में, कबहूँ न कीजै बास।।

कोकिल बायस एक सम, पण्डित मूरख एक।

इन्द्रायन दाड़िम विषय जहाँ न नेकु विवेक।।

6. **अंग्रेज़ शासन का विरोध** : भारतेन्दु ने प्रतिकूल तत्कालीन परिस्थितियों के कारण खुले स्वर में अंग्रेज़ सरकार का विरोध तो नहीं किया लेकिन आपने साहित्य के माध्यम से बार–बार इसकी ओर संकेत अवश्य किया। वह सरकार लोगों को परेशान करती थी। उसके अधिकारी जनता को लूटते थे ओर वे लोगों के पैसे से अपने घर भर रहे थे। अंग्रेज़ अपनी नीतियों से धीरे–धीरे सारे देश में फैलते जा रहे थे––

चूरन साहब लोग जो खाता

सारा हिन्द हज़म कर जाता

नाटककार 'हज़म' शब्द के माध्यम से यह कहना चाहता है कि अंगेज़ों ने लार्ड डलहौजी की लैप्स की नीति के अन्तर्गत झूठे बहानों से भारतीय राज्यों को अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया था या उन पर अपने पिट्ठू शासकों को बिठा दिया था। उन्होंने छल प्रपंच करने वाले देशद्रोहियों को सत्ता में भागीदारी बना लिया था। सच्चे सीधे और ईमानदार लोग परेशान थे और दुष्ट मजे कर रहे थे–

सांचे मारे–मारे डोले। छली दुष्ट सिर चढ़ि–चढ़ि बोलैं।

प्रगट सभ्य अन्तर छल धारी। सोई राज सभा बल भारी।

7. **व्यवस्था में अव्यवस्था चित्रण** : तत्कालीन समाज में अधिकारी वर्ग भ्रष्ट था। उनके लिए व्यक्ति का बुद्धि कौशल और गुणों से युक्त होना महत्त्वपूर्ण नहीं था बल्कि उसका भ्रष्ट और रिश्वतखोर होना था। न्यायालयों में कार्य करने वाले भ्रष्ट थे–

1. जैसे काजी वैसे पाजी। रैयत राजी टके सेर भाजी।
2. चूरन अमले सब जो खावें। दूनी रिश्वत तुरत पचावैं
3. चूरन पुलिस वाले खाते। सब कानून हज़म कर जाते।

अंग्रेज़ों के शासनक काल में अधिकारियों का कार्य भ्रष्ट तरीकों से पैसा लूटकर अंग्रेज़ों की जड़ें भारत में जमाना था। वे उनके काले कारनामों पर स्वीकृति की मोहर लगाया करते थे। पुलिस वालों के लिए कोई नियम–कानून नहीं थे। कानून की रक्षा करने वाले ही कानून तोड़ते थे। सारे देश में अराजकता थी– 'अन्धाधुन्ध मच्यौ सब देसा।' भारतेन्दु ने पाठकों, दर्शकों को उनके काले कारनामों से परिचित कराया था ताकि उनके विरुद्ध उनकी भावनाएं जागृत हो सकें।

8. **जाति–वर्ग का पतन** : भारतेन्दु ने अपने युग में ब्राह्मणों के द्वारा किए गए शोषण का प्रभावपूर्ण चित्रण किया है और माना है कि उन्होंने धर्म को भी व्यापार बना दिया है। जब चाहें और जिससे चाहें–वे पैसे के लालच में उसका धर्म परिवर्तन करा देते हैं–**जात लें जात, टके सेर जात। एक टका दो हम अभी अपनी जात बेचते हैं टके के वास्ते ब्राह्मण से धोबी हो जाएं और धोबी को ब्राह्मण कर दें। टके के वास्ते जैसी कहो वैसी व्यवस्था दें। टके के वास्ते झूठ को सच करें। टके के वास्ते ब्राह्मण से मुसलमान, टके के वास्ते हिन्दू से क्रिस्तान। टके के वास्ते धर्म और प्रतिष्ठा दोनों बेचें, टके के वास्ते झूठी गवाही दें। टके के वास्ते पाप को पुण्य मानें। टके के वास्ते नीच को भी पितामह बनावें। वेद, धर्म, कुल–मर्यादा, सचाई/बड़ाई सब टके सेर। लुटाय दिया अनमोल माल। ले टके सेर।**

तत्कालीन समाज में महाजन लोगों का शोषण करते थे। सामान्य जनता को मेहनत से कमाया हुआ धन तरह–तरह के बहानों से डकार जाते थे––

चूरन सभी महाजन खाते।

जिससे जमा हज़म कर जाते।

चूरन खाते लाला लोग।

जिनको अकिल अजीरन रोग।

वास्तव में भारतेन्दु युगद्रष्टा थे। उन्होनें 'अन्धेर नगरी' में तत्कालीन समाज, सामयिक विचार, युगीन चेतना, जन–आकांक्षा और राष्ट्रीय भावना को चित्रित किया था। हास्य का सहारा लेकर उन्होंने कुशासन, विवेकहीनता के दुष्परिणाम, न्याय–व्यवस्था के दोष और नैतिक हनन को प्रस्तुत किया था ताकि वह समाज के समक्ष भ्रष्ट राजतन्त्र और दूषित न्याय व्यवस्था को प्रस्तुत करें। इसकी प्रासंगिकता आज भी है क्योंकि हमारा शासन तन्त्र और न्याय व्यवस्था अभी भी भ्रष्ट है।

प्रश्न 3. अभिनेयता की दृष्टि से 'अन्धेर नगरी' नाटक की समीक्षा कीजिए।

उत्तर – भारतेन्दु के युग में हिन्दी रंगमंच का अपना कोई आधार नहीं था। पारसी थिएटर कम्पनियां ही प्रायः जनता के लिए नाटक लिखती थी और उनका सस्ता मनोरंजन करती थी। लेकिन भारतेन्दु ने हास्य, शृंगार, कौतुक, समाज संस्कार और देश–प्रेम को आधार बनाकर अपने नाटक लिखे ही नहीं बल्कि उनके मंच पर अभिनीत कराने का प्रयत्न भी किया था। वह स्वयं भी अभिनय करते थे। 'अन्धेर नगरी' की रचना इसी दृष्टि से की गई थी। इसकी रचना उस समय असंख्य अशिक्षितों, गांव वासियों और सामान्य लोगों के लिए की गई थी ताकि लोग सीधी–सादी भाषा में सीधे सादे प्राख्यान को सरलता से समझ सकें। उन्होंने 'अन्धेर नगरी' की रचना 'नेशनल थिएटर' के लिए एक ही रात में की थी ओर इसे तभी मंचित भी किया गया था। उनका मानना था कि नाटक का रंगमंच से सीधा सम्बंध है। यदि कोई नाटक मंच के लिए उपयुक्त नहीं है तो उस नाटक की सफलता पर प्रश्न चिन्ह लगाना चाहिए। यदि नाटक प्राण है तो उसका शरीर मंच है। अभिनेयता किसी भी नाटक का अनिवार्य गुण है क्योंकि इसी के द्वारा सभी प्रकार के आनन्द की प्राप्ति सम्भव हो सकती है। इसी विचार को मन में रखकर भारतेन्दु ने नाटक लिखे थे निर्देशित किए थे और स्वयं अभिनय भी किया था।

'अन्धेर नगरी' अभिनेयता की दृष्टि से अत्यन्त सफल रचना है जिसे नौटंकी के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। यह एक प्रहसन है जिसमें अनेक गूढ़ार्थ व्यंग्य भरे हुए हैं। यह मात्र मनोरंजन का साधन नहीं है बल्कि इसके माध्यम से अनेक राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक समस्याओं को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया गया है ताकि तत्कालीन जनता उन समस्याओं को जान सके और उन पर सोच–विचार कर सके। डॉ॰ रामविलास शर्मा के शब्दों में, ''अन्धेर नगरी अंग्रेज़ी राज्य का ही दूसरा नाम है.....अंग्रेज़ी राज्य की अन्धेर गर्दी की आलोचना ही नहीं, वह इस अन्धेर गर्दी को खत्म करने के लिए भारतीय जनता की प्रबल इच्छा भी प्रकट करता है। इस तरह भारतेन्दु ने नाटकों को जनता का मनोरंजन करने के साथ उसका राजनीतिक शिक्षण करने का साधन भी बनाया ।'' इस नाटक की सारी घटनाएं एक दूसरे से बंधकर समग्रता और पूर्णता की ओर आगे बढ़ती हैं। इन घटनाओं तथा नाटक के कथावस्तु में दोष विद्यमान् नहीं है। अभिनेयता की दृष्टि से 'अन्धेर नगरी' में निम्नलिखित विशेषताएं विद्यमान हैं––

1. **उपयोगी कथानक** : 'अन्धेर नगरी' नाटक का कथानक निश्चित और सुविचारित योजना का परिणाम हैं लेखक ने अपने युग के लोगों की शिक्षा, मनोवृत्ति और रुचियों को ध्यान में रखकर इस नाटक का कथानक अति सरल और लधु आकार का निश्चित किया था। बिहार के किसी रजवाड़े को आधार बना कर लिखे जाने वाले इस हास्य नाटक में महन्त जी अपने दो शिष्यों के साथ चौपट्ट राजा की अन्धेर नगरी में प्रवेश करते हैं जहां हर वस्तु टके सेर बिकती है। गोवर्धनदास नामक चेला उस नगर के वैभव से प्रभावित होकर वहीं रहने का निर्णय

कर लेता है। वह रोज मिठाई खा–खाकर कुछ ही समय में मोटा हो जाता है। नगर में किसी व्यक्ति की दीवार गिर जाने से एक बकरी मर गई जिस कारण उसने चौपट्ट राजा से न्याय की फरयाद की। अविवेक और मूर्खता का परिचय देते हुए कोतवाल को इस कारण मौत की सज़ा सुना दी गई लेकिन फांसी का फंदा कोतवाल की पतली गर्दन में पूरा न आ पाने के कारण मोटे गोवर्धनदास की गर्दन में डालने का प्रयत्न किया जाता है। समय पर महन्त जी वहां पहुंच जाते हैं और वह अपनी चतुराई से चोपट्ट राजा को ही फांसी के फंदे तक पहुंचा देते हैं। भारतेन्दु ने बड़ी सहजता से कथानक को गति प्रदान की है। सभी छोटी–छोटी घटनाएं आपस में बड़ी निपुणता और सहजता से जोड़ दी गई हैं जिस कारण कथानक में कहीं–कहीं अवरोध उत्पन्न हुआ है और न ही जटिलता दिखाई देती है। उसमें गति है , सरसता है, सरलता ओर संक्षिप्तता है जो किसी सफल नाटक के लिए आवश्यक होती हैं।

2. **उपयोगी अंक योजना :** 'अन्धेर नगरी' में छः अंक हैं जो आकार में काफ़ी छोटे हैं। उन्हें अलग–अलग स्थान के आधार पर बांटा गया है। हर अंक एक–दूसरे से जुड़ा हुआ है और पिछली कथा को उसके द्वारा गति प्राप्त होती है और अन्तिम अंक में नाटक का चरम उत्कर्ष प्राप्त हो जाता है और चौपट्ट राजा अपनी इच्छा से मरने के लिए फांसी के फंदे पर जा खड़ा होता है। नाटक के हर अंक के साथ पाठक और दर्शक का मन निरन्तर जिज्ञासा से भरता जाता है और अन्तिम अंक की समाप्ति के साथ ही वह कथानक के निरन्तर बदलाव और चौपट्ट राजा के निर्णय के कारण ठहाका लगाकर हंस पड़ता है। पहले अंक में मंच पर महन्त जी तथा उनके दो चेलों के आने से मन में यह जानने की इच्छा उत्पन्न होती है कि अब क्या होगा। दूसरे और तीसरे अंक में बाज़ार और जंगल का वर्णन होता है तो चौथे अंक में बकरी के मर जाने पर राजा के द्वारा कोतवाल को मौत की सज़ा सुनाई जाती है। पांचवें अंक में कोतवाल को इसलिए फांसी पर नहीं लटकाया जाता कि उसकी गर्दन पतली है और वह फंदे में पूरी नहीं आती। गोवर्धनदास को फांसी के फंदे पर लटकाने का निर्णय इसलिए किया जाता है कि उसकी मोटी गर्दन फंदे के आकार के अनुसार बिल्कुल ठीक है। छठे अंक में सभी पाठकों/दर्शकों को आशा होती है कि बेचारा गोवर्धनदास निरपराध ही मारा जाएगा लेकिन आश्चर्य तब होता है जब स्वयं चौपट्ट राजा बैकुण्ठ जाने की इच्छा में फांसी के फंदे पर पहुंच जाता है। उन्होंने अंकों के बीच कथानक को कहीं भी शिथिलता नहीं आने दी।

3. **गतिशील दृश्य–विधान :** 'अन्धेर नगरी' का दृश्य–विधान निरन्तर परिवर्तनशील हैं। यदि ध्यान से देखा जाए तो इस नाटक में छः अंक नहीं हैं बल्कि छः दृश्य विधान हैं जिन्हें बाह्य प्रान्त, बाजार, जंगल, राजसभा, अरण्य और श्मशान नाम से प्रकट किया गया है। इन सभी दृश्यों को पर्दे बदल कर बहुत तेज़ी से बिना किसी देरी के दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया जा सकता है। उनके विधान में किसी प्रकार का कोई आडम्बर नहीं है। हर दृश्य एक दूसरे पर आश्रित है। एक ही मंच पर पर्दों के परिवर्तन से पूरा नाटक सरलता से अभिमंचित किया जा सकता है। इस नाटक की कथावस्तु निरन्तर परिवर्तनशील दृश्य–विधान की गई तकनीक पर आधारित है जिसमें न तो लम्बे अंक हैं और न ही स्टेज संवारने और बदलने में लम्बा समय लगता है इसलिए दर्शक की रुचि नाटक में बनी रहती है।

4. **अनुकूल पात्र संख्या :** 'अन्धेर नगरी' में पात्र संख्या बहुत सीमित है। यद्यपि इसके बाज़ार अंक में अनेक लोग अपना–अपना सामान बेचने वाले हैं लेकिन वे इतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं कि दर्शक या पाठक को उनकी विशेषताओं से स्वयं को जोड़ना पड़े। इसी प्रकार राजसभा में भी आने वाले लोग भी केवल दृश्यों को यथार्थ और जीवन देने वाले हैं। नाटक में मूल पात्र तीन ही हैं––महन्त, राजा और गोवर्धन दास। नाटक की सारी कहानी इन तीनों के आसपास ही घूमती रहती है जिस कारण दर्शक या पाठक के भाव इनसे शीघ्र जुड़ जाते हैं। इनकी सृष्टि जीवन के यथार्थ की प्रस्तुति के लिए न कि थोथे आदर्शों को गढ़ने के लिए। ये दोनों पात्र धर्म विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं। यदि राजा चौपट्ट उस समय के रजवाड़ों का प्रतिनिधि है तो महन्त जी और गोवर्धनदास

धार्मिक वृत्तियों और ढोंगी मानसिकता के प्रतिनिधि हैं। पात्रों की सीमित संख्या झट से अपने पाठक या दर्शक के साथ तारतम्यता जोड़ लेती हैं जिसका उनके मन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

5. **रंगसूत्र :** भारतेन्दु का सीधा सम्बन्ध रंगमंच से था। वह केवल नाटककार ही नहीं थे अपितु निर्देशक भी थे। वह स्वयं भी अभिनय करते थे इसलिए उन्हें रंगमंच की बारीकियों का भली–भान्ति परिचय प्राप्त था। एक सफल और कुशल निर्देशक की तरह सारे नाटक में उन्होंने स्वयं रंग संकेत दिए हैं। चरित्रानुकूल वेशभूषा तथा नाटकीय प्रभाव के प्रकट करने के लिए उन्होंने स्थान–स्थान पर विशिष्ट शब्दों का प्रयोग किया है, जैसे ––

(क) महन्त जी दो चेलों के साथ गाते हुए आते हैं।

(ख) गाते हुए सब जाते हैं।

(ग) बाबा जी का चेला गोवर्धन दास आता है और सब बेचने वालों की आवाज़ सुन–सुन कर आनन्द में बड़ा प्रसन्न होता है।

(घ) कुंजड़िन के पास जाकर

(ङ) हलवाई के पास जाकर

(च) हलवाई मिठाई तोलता है बाबा जी मिठाई लेकर खाते हुए और अन्धेर नगरी गाते हुए जाते हैं

(छ) मिठाई की झोली अपने सामने रखकर खोलकर देखता है।

(ज) (चिल्लाकर) पान खाइए, महाराज।

(झ) (पीनक से, चौंक के घबराकर उठता है) क्या कहा ? सूपरना आई ए महाराज (भागता है)

(ञ) (राजा का हाथ पकड़कर) नहीं–नहीं यह कहता है कि पान खाइए महाराज।

(ट) गोवर्धनदास चिल्लाता है, प्यादे उसको पकड़ कर ले जाते हैं।

(ठ) पैर पकड़कर रोता है।

(ड) रोता है, सपाही लोग उसे घसीटते हुए ले चलते हैं गुरु जी और नारायण दास आते हैं।. . . आदि रंग संकेतों की सहायता से नाटक के पात्र अपना–अपना कार्य और अभिनय सरलता से कर पाते हैं जो अभिनेयता की दृष्टि से नाटक को सबलता और विशिष्टता प्रदान करते हैं।

6. **प्रभावपूर्ण संवादयोजना :** अन्धेर नगरी की संवाद योजना बहुत प्रभावशाली है। छोटे–छोटे संवादों की योजना के द्वारा दर्शक और पाठक की बुद्धि पर अनुकूल प्रभाव डाला जा सकता है। भारतेन्दु ने ऐसा ही किया है। नाटक में सर्वत्र छोटे संवाद ही है। 'बाजार' के दृश्य में अपना–अपना सामान बेचने वाले अपनी बात कुछ लम्बी अवश्य करते हैं लेकिन यथार्थवाद के बहुत निकट होने के कारण वे चुभते नहीं हैं। साथ ही वे पद्यात्मकता और गद्यात्मकता से युक्त है इसलिए वे अपने में विशेष रोचकता को छिपाये हुए हैं। संवाद में चुटीलापन है, व्यंग्य है ओर वे लाक्षणिकता के गुण से युक्त हैं। सीधे–सादे संवाद कहीं–कहीं एक शब्दात्मक भी है।

7. **गीत–योजना :** भारतेन्दु नाटकों में गीतों की योजना का प्रचलन था क्योंकि पारसी थिएटरों का मुकाबला करने के लिए उन्हें ऐसा करना पड़ता था। नाटकों में गीतों की बड़ी संख्या घटना क्रम में

अवरोध बनती है लेकिन अन्धेर नगरी में दिए गए कुछ गीत यथार्थ परिचय देने के कारण खटकते नहीं हैं। भारतेन्दु ने व्यंग्य प्रधान शैली में अपने गीतों की रचना इस प्रकार की थी युगीन समस्याएं लोगों के मन में नहीं बल्कि उनकी जिह्वा पर गीतों के माध्यम से आ गई थी। डॉ॰ राम विलास शर्मा के अनुसार, ''भारतेन्दु के गीत और हास्य भरे वाक्य लोगों की जुबान पर चढ़ गए हैं और उनकी प्रहसन कला यहां अपने चरमोत्कर्ष पर दिखाई देती है।'' पहले अंक में महन्त जी और उनके चेले राम–नाम का स्मरण लयात्मकता में करते हैं तो पाँचों अंक में गोवर्धनदास तत्कालीन परिस्थितियों को लय में प्रस्तुत करता है। ये गीत अति सरल शब्दों में गाए हैं जिससे कथा को अवरोध नहीं मिला है।

8. **अभिनेय भाषा–शैली** : नाटक की सफलता का दायित्व बहुत बड़ी सीमा तक सरल भाषा शैली पर निर्भर करता है। संवादों को नाटक की आत्मा माना जाता है तो भाषा संवादों का प्राण तत्त्व है। लेखक ने अन्धेर नगरी में सरल, सहज और पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है जिस कारण पात्रों का चरित्र पाठक/दर्शक के समक्ष बहुत अच्छे ढंग से प्रकट हो पाया है। भाषा की सरलता ने वातावरण–सृष्टि में सहायता दी है। नाटककार ने विभिन्न पात्रों के लिए उनके अनुरूप शब्दावली का चयन किया है। साधु–संतों के लिए उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दावली में एक विशिष्टता है जो समाज के अन्य, वर्गों के प्रायः स्वीकार नहीं की जाती। 'भिच्छा–उच्छा', 'और क्या', 'जो है सो', 'बाल–भोग सिद्ध हो', 'नारायण सब समर्थ है', 'अरे बच्चा' आदि ऐसे शब्द है जिसका अधिकतर प्रयोग संत महात्माओं के द्वारा किया जाता है। इसी प्रकार बाज़ार में सामान बेचने वाले लोगों की भाषा भी अपने आप में विशिष्टता लिए हुए है। कबाब, चूरन, भाजी, मछली, मेवा आदि बेचने वाले सभी लोगों ने विशिष्ट ढंग से अपना कार्य किया है जिसने पाठकों/दर्शकों के मन को निश्चित रूप से प्रभावित किया है। नौटंकी शैली में रचित नाटक के कुछ भागों में तुक मेरे वाक्य है। उनके पद्यात्मक भागों में ब्रज की प्रधानता है। जगह–जगह उपदेशात्मक स्वर गूंज उठता है औद दर्शक/पाठक को प्रभावित कर देता है।

वस्तुतः अंधेर नगरी अभिनेयता की दृष्टि से पूर्णरूप से सफल रचना है जिसका एक बार नहीं बल्कि अनेक बार मंचन हो चुका है। तत्कालीन परिवेश को उजागर करने में सक्षम यह नाटक आज भी हमारे युग को उजागर करने में पूरी तरह से समर्थ है इसीलिए वर्तमान में भी नाटककार बार–बार इसे अभिमंचित करने के लिए प्रयत्नशील होते रहे हैं।

प्रश्न 4. 'अन्धेर नगरी' के नामकरण की सार्थकता पर विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपने 'अन्धेर नगरी' को परम्परा से चली आ रही लोकोक्ति 'अन्धेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा' पर आधारित किया है जिसमें बिहार के किसी मूर्ख और अत्याचारी शासक को आधार बनाकर उसके कुकर्मों पर प्रकट किया है। एक सामान्य सी लोकोक्ति के माध्यम से लेखक ने तत्कालीन शासन व्यवस्था को दोषों, शोषण, स्वार्थपरता आदि को एक साथ प्रकट करके अपने कौशल को प्रकट कर दिया है।

सामान्य रूप से हर वस्तु को पहचान के लिए कोई न कोई प्रत्येक वस्तु का कोई–न–कोई नाम अवश्य होता है, जिससे उसकी विशिष्टता बनी रहे। साहित्यिक क्षेत्र में भी रचना का नाम, उसकी अलग पहचान बनाये रखने के लिए आवश्यक होता है। नाटक के क्षेत्र में नामकरण का बहुत महत्त्व है। फिर भी नामकरण से सम्बन्धित विस्तृत शास्त्रीय विवेचन नहीं प्राप्त होता है। हिन्दी साहित्य में नाटकों का नामकरण सामान्यतः निम्नलिखित आधारों पर प्राप्त होता है––

1. **नायक के नाम पर** : जो नाटक नायक प्रधान होते हैं, उनका नामकरण नायक के नाम पर किया जाता है। जैसे–अशोक, चन्द्रगुप्त, स्कंदगुप्त, अजातशत्रु, नाना फड़नवीस आदि।

2. **नायिका के नाम पर** : जो नाटक नायिका प्रधान होते हैं, उनका नामकरण नायिका के नाम पर किया जाता है। जैसे ध्रुवास्वामिनी, राज्यश्री, श्री चन्द्रावली, नीलदेवी, पद्मावती आदि।

3. **मूल भाव पर** : जिन नाटकों का नामकरण उनके उद्देश्य अथवा मूल भाव पर आधारित होता है वे इस श्रेणी में आते हैं। जैसे––धर्मालाप, तन–मन–धन गोसाई जी के अर्पण, कल्याणी परिणाम, चक्रव्यहू, गोरक्षा, गोसंकट आदि।

4. **घटना के आधार पर** : नाटक में घटित किसी घटना के आधार पर किया गया नामकरण इस श्रेणी में आता है। जैसे ––सज्जन, जनमेजय का नाग यज्ञ, सिन्दूर की होली, राखी की लाज, अभिमन्यु वध, आहुति, रक्षा बंन्धन अादि।

5. **स्थान के नाम पर** : किसी स्थान के नाम पर जिन नाटकों का नामकरण किया जाता है, वे इस श्रेणी में आता है। जैसे पाकिस्तान, वितस्ता की लहरें, कश्मीर का कांटा, झांसी की रानी, चित्रकूट आदि।

6. **प्रतीकात्मकता के आधार पर** : इस प्रकार के नामकरण नाटक में व्यक्त भावों, लक्षणों, प्रतीकों आदि के आधार पर किए जाते हैं। जैसे––भारत–दुर्दशा, कामना, अन्धेर नगरी, धूप–छांव, राक्षस का मन्दिर, लहरों का राजहंस, अंधा युग, करुणालय आदि।

नाटक के नामकरण के लिए लेखक चाहे कोई भी पद्धति क्यों न अपनायें, अपनी रचना का नामकरण करने से पूर्व उस नाटक के मूल–तथ्य, पात्र, उद्देश्यमूल भाव आदि का विशेष ध्यान रखना रखना पड़ता है। नामकरण सरल, मौलिक, संक्षिप्त एवं जिज्ञासा उत्पन्न करने वाले होने चाहिए। आकर्षक एवं उपयुक्त नामकरण वाली रचना पाठक एवं आलोचक को स्वयं ही अपनी ओर आकर्षित कर लेती है।

यदि 'अन्धेर नगरी' के नामरकण के औचित्य को परखा जाए तो इसे विभिन्न आधारों पर स्थापित करना होगा।

1. **ऐतिहासिक आधार** : हमारा देश विभिन्न जातियों, धर्मों, सम्प्रदायों, भाषाओं आदि को सदा प्रश्रय देता रहा है और यही इसे तोड़ने और खण्डित करने का आधार बना रहा है। यह एक नहीं अपितु, अनेक बार विदेशियों का गुलाम बना है। शक, हूण, पुर्तगाली, डच, अंग्रेज़ आदि ने हमारा शोषण किया, हमें कुचला लेकिन हर बार हमारी गुलामी का मूल कारण आपसी भेदभाव, साम्प्रदायिक, मतभेद और धर्म के नाम पर वैर–भाव ही रहे। हमारा इतिहास इस तथ्य का सदा साक्षी है कि हम अपनों से सदा हारे हैं तथा उनके कारण दूसरों के द्वारा हराये गए हैं। हमारी आपसी फूट हमारे घर को तोड़ती रही है। भारतेन्दु ने इस तथ्य को गम्भीरता से लिया था तभी तो उन्होंने कुंजड़िन के मुंह से कहलवाया था––

ले हिन्दुस्तान का मेवा फूट और बैर

मानव का स्वभाव है कि कोई कभी स्वयं को धोखा नहीं देता लेकिन हम स्वयं को धोखा दे कर इसे 'अन्धेर नगरी' बनाने का प्रयत्न करते रहे हैं।

2. **सामाजिक आधार** : लेखक ने नाटक के आधार रूप में जिस समाज को ग्रहण किया है वह अंग्रेज़ी शासन काल का समाज है जो भ्रष्ट शासकों के कारण से भ्रष्ट हो गया था। सारे समाज में अराजकता थी, अन्यायपूर्ण और विकृत व्यवस्था थी। सर्वत्र लालच, शोषण और स्वार्थपरता पनप रही थी––

(क) चना हाकिम सब जो खाते।

सब पर दूना टिकस लगाते।

(ख) चुरन सभी महाजन खाते।
जिससे जमा हज़म कर जाते।।

(ग) चूरन पुलिस वाले खाते।
सब कानून हज़म कर जाते।।

(घ) वेश्या जोरु एक समान।
बकरी गउएक करि जाना।।

(ङ) भीतर होइ मलिन की कारो।
चाहिए बाहर रगँ चटकारो।।

तत्कालीन समाज बाहर से चाहे जैसा भी दिखता हो पर भीतर से मर्यादा–हीन हो गया था। यह अन्धी व्यवस्था, अन्धे कानून और विवेकशून्य व्यवस्था का प्रतीक बनकर रह गया था। अंग्रेज़ सरकार इसकी अवनति का कारण बनती जा रही थी। लेखक ने प्रतीकात्मकता का सहारा लेकर यह बताना चाहा है कि अंग्रेज़ी कानून, न्याय व्यवस्था और शासनतन्त्र दूषित था । उस समाज में पण्डित और मूर्ख में कोई भेद नहीं था, शोषक और शोषित एक समान थे, अपराधी और निरपराधी में कोई अन्तर नहीं था।

3. **धार्मिक आधार :** अंग्रेज़ी शासनकाल में हमारे देश में धार्मिक भेद–भाव को बढ़ावा मिला था। धर्म के नाम पर वैर–भाव बढ़ गया था। यह बाज़ार में बिकने वाली एक वस्तु बनकर रह गई थी। धर्म और जातियां विखण्डित होने लगी थी। 'बाज़ार' में हलवाई इसी बात की पुष्टि करता है–**ऐसी जात हलवाई छत्तिस कौम हैं भाई !** उस समय धर्म के नाम पर अधर्म बढ़ने लगा था। पण्डे–पुजारी स्त्रियों का शील–हरण का षड्यन्त्र रचने लगे थे–**'मन्दिर के भितरिए वैसे अन्धेर नगरी के हम'।** जातवाला ब्राह्मण तो स्पष्ट रूप से धर्म के क्षेत्र में अन्धेर नगरी के नामकरण का आधार स्पष्ट कर देता है–

जात लें जात, टके सेर जात। एक टका दो हम अभी अपनी जात बेचते हैं टके के वास्ते ब्राह्मण से धोबी हो जाएं और धाबी को ब्राह्मण कर दें। टके के वास्ते जैसी कहो वैसी व्यवस्था दें। टके के वास्ते झूठ को सच करें टके के वास्ते ब्राह्मण से मुसलमान, टके के वास्ते हिन्दू से क्रिस्तान। टके के वास्ते धर्म और प्रतिष्ठा दोनों बेचें, टके के वास्ते झूठी गवाही दें।

लेखक ने प्रकट करना चाहा है कि तत्कालीन धार्मिक परिवेश 'अन्धेर नगरी' के अन्धी विवेकहीन मान्यताओं का था। जिसमें परम्परागत उच्च धार्मिक मान्यताओं का पूर्णरूप से हनन हो रहा था। वेद, धर्म, कुल, मर्यादा आदि सब टके सेर बिकने लगे। धर्म में ठेकेदार, प्रजा को दिशा दिखाने वाले सन्त–महात्मा, समाज के व्यवस्थापक आदि सब पेट की चिन्ता में उठने वाले थे। धर्म तो मात्र एक व्यापार बनकर रह गया था। गोवर्धनदास का कथन इसी बात की पुष्टि करता है, **''माना की देश बहुत बुरा है। पर अपना क्या ? अपने किसी राज–काज में छोड़े हैं कि कुछ डर है, रोज मिठाई चाभना, मजे में आनन्द से राम भजन करना।''** उस समय सन्त महात्मा आत्मकेन्द्रित थे और स्वार्थ मे लिप्त थे।

4. **अविवेकी शासक :** भारतेन्दु ने अपने नाटक का आधार बिहार के किसी शासक को बनाया है तो किसी भी दृष्टि से शासक बनने योग्य नहीं था। 'जैसा राजा वैसी प्रजा' के आधार पर प्रजा को भी उसी के अनुरूप बदल जाना था। 'चौपट्ट राजा', साभिप्राय शब्द है। इस का सम्बन्ध ऐसे राजा से है जिसने अपने अविवेक, दुराचरण और दुर्बुद्धिपूर्ण नीतियों से सारे देश को चौपट कर दिया हो। जिस कारण देश को चौपट कर दिया हो। जिस

कारण देश का सर्वनाश हो रहा हो जनता दुःखी हो। इस नाटक में चौपट्ट राजा अविवेकी है, मूर्ख है, नशेबाज है। वह हर समय नशे में डूबा रहता है और साधारण सी बात भी उसकी बुद्धि में ठीक प्रकार से नहीं घुसती। वह गाली–गलौच करता है तथा अपना दोष दूसरों के मत्थे मढ़ देना चाहता है। वह न्याय–अन्याय में अन्तर नहीं जानता। वह चरित्र से गिरा हुआ है और एक पत्नीव्रत नहीं है। उसके इस कथन से **''मंत्री बेर–बेर तुम को सौत बुलाना चाहता है।''** स्पष्ट हो जाता है कि वह व्यभिचारी हैं तथा अन्य नारियों से उसके सम्बन्ध हैं। वह अन्धविश्वासी है। वह अहंकारी तथा निरंकुश है तभी तो वैकुण्ठ जाने के अवसर पर वह कहता है, **''चुप रहो, सब लोग। राजा के होते और बैकुण्ठ कौन जा सकता है।''** लेखक ने चौपट्ट राजा के रूप में अंग्रेज़ी शासन व्यवस्था को माना है जिस कारण सारा देश अराजकता का शिकार हो गया था। सर्वत्र मूल्यहीनता की स्थिति है तथा गुण–ग्राहयता समाप्त हो गई है। सब ओर अन्धाधुन्ध मची है, पूर्ण निरकुंशता का राज्य है। विदेश से इस देश का राजकाज अंग्रेज़ चला रहे हैं। यहां का धन लूटकर वे अपने देश ले जा रहे हैं––

(क) हिन्दू चूरन इसका नाम।
विलायत पूरन इसका काम।।

(ख) भीतर स्वाहा बाहर सादे।
राज करहिं अगले अरु प्यादे।।
अन्धाधुन्ध मच्यौ सब देसा।
माहुँ राज रहत विदेसा।।

भ्रष्ट राज में भ्रष्टाचारी पनप रहे हैं जिनके सामने भले लोगों की एक नहीं चलती। अंग्रेजी राज में देश की आर्थिक स्थिति कुछ खराब है जिस कारण यहां रहने वाला कोई व्यक्ति मोटा ही नहीं होता। नाटक में प्रस्तुत विभिन्न प्रसंगों और आधारों के द्वारा यही प्रमाणित होता है कि जब देश का राजा ही धूर्त, कपटी ओर अविवेकी होगा तो देश वर्ग अधोगति को प्राप्त करना अनिवार्य है। नाटककार ने प्रतीकात्मकता का सहारा लेकर इस नाटक का नामकरण किया है, जो पूर्ण रूप से सार्थक है। नाटक का उद्देश्य, कथ्य ओर प्रतिपाद्य इस के द्वारा स्पष्ट हो जाते हैं इसलिए नामकरण पूर्ण रूप से सार्थक है।

प्रश्न 5. 'अन्धेर नगरी' नाटक के आधार पर महन्त जी का चरित्र–चरित्रण कीजिए ।

उत्तर – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा रचित हास्य नाटक 'अन्धेर नगरी' में मुख्य तीन ही पात्र हैं जिनमें महन्त जी वर्ग विशेष से सम्बन्धित हैं। वह नाटके के आरम्भ और फिर अन्त में मंच पर दिखायी देते हैं और दर्शक/पाठक पर अपनी बुद्धि और व्यवहार कुशलता की छाप छोड़ जाते हैं। उनका चरित्र जीवन के बहुत निकट है। वह सहज रूप से जीवन व्यतीत करते हैं और कहीं भी अपना ऐसा रूप नहीं दिखाते जिसमें वह अन्य व्यावहारिक दिखायी देते हो उनका चारित्रिक विकास यथार्थ के बहुत निकट है। यद्यपि लेखक ने कहीं भी बलपूर्वक उनके चरित्र का विकास दिखाने का प्रयत्न नहीं किया तो वह सभी की बुद्धि को प्रभावित करने में समर्थ सिद्ध हुए हैं और चौपट्ट को अपनी बुद्धि कौशल से फांसी के तख्ते पर पहुंचा कर सभी का मन जीत लेते हैं। उनके चारित्रिक विकास में निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएं विद्यमान हैं––

1. **ईश्वर भक्ति** : महन्त जी पूर्ण रूप से आस्तिक हैं और वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करने वाले सक्षम पुरुष हैं। वह घर–गृहस्थी नहीं है। अपने दो शिष्यों नारायण दास और गोवर्धनदास के साथ वह सांसारिक मोह–माया से दूर रह कर ईश्वर भक्ति में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। वह मानते हैं कि मानव का हर कार्य ईश्वर के द्वारा ही होना है। ईश्वर अपने भक्तों का कल्याण ही करते हैं। नाटक के छठे अंक में वह अपने चेले से यही बात कहते हैं––**'कोई चिन्ता नहीं, नारायण सब समर्थ है'** महन्त जी के जीवन का परम उद्देश्य एक ही है। वह रामभक्ति में अपना जीवन बिताना चाहते हैं––

राम भजो राम भजो राम भजो भाई।

राम के भजे से गनिका तर गई,

राम के भजे से गीध गति पाई।

राम के नाम से काम बनै सब,

राम के भजन बिनु सबहिं नसाई।

राम के नाम से दोनों नयन बिनु

सूरदास भए कवि कुल राई।

राम के नाम से घास जंगल की

तुलसी दास भए भजि रघुराई।

उनकी राम–नाम में अटूट आस्था है और वह इसी में अपना जीवन व्यतीत करना चाहते हैं।

2. **विवेकशील** : महन्त जी बुद्धिमान् हैं। वह आने वाले समय को जान लेने की क्षमता रखते हैं इसीलिए वह हर कष्ट से बच निकलने के कौशल को जानते हैं। अपने विवेक के कारण ही वह गोवर्धन दास को अन्धेर नगरी छोड़कर अन्यत्र चले जाने की सलाह देते हैं और कहते हैं––

सेत सेत सब एक से, जहां कपूर कपास।

ऐसे देस कुदेस में, कबहुँ न कीजै बास।।

कोकिल द्वास एक सम पण्डित मूरख एक।

इन्द्रायन, दाडिम विषय, जहां न नेक विवेक।।

बसिए ऐसे देस नहिं, कनक वृष्टि जो होय।

रहिए तो दुःख पाइए, प्रान दीजिए रोय।।

महन्त जी ने अपने विवेक का परिचय देते हुए ही गोवर्धन दास की चौपट्ट राजा की फांसी के फंदे से रक्षा की थी तथा अविवेकी राजा को वह फंदा प्रदान कर दिया था।

3. **त्याग–भाव** : महनत जी के जीवन में लोभ का कोई स्थान नहीं था। वह न तो स्वयं लोभी हैं और न ही अपने शिष्यों को लोभ के लिए कहते हैं। वह जीवन की गुजर–बसर के लिए थोड़े में ही अपना काम चलाना चाहते हैं। वह कहते हैं––**''देख, जो कुछ सीधा–सामग्री मिले तो श्री शालाराम जी का बाल–भोग सिद्ध हो।''** वह अपने शिष्यों को लालच न करने की प्ररेणा देते हैं––

लोभ पाप का मूल है, लोभ मिटावत मान

लोभ कभी नहिं कीजिए, या मैं नरक निदान।।

वह लोभ को पाप का मूल मानते हैं क्योंकि हर लोभी व्यक्ति धीरे–धीरे पाप के गर्त की ओर निरन्तर बढ़ता जाता है।

4. **साधु प्रवृत्ति** : महन्त जी भारतीय समाज के महत्त्वपूर्ण साधु समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनमें सभी विशेषताएं विद्यमान हैं जो किसी साधु महात्मा में होनी चाहिए। वह स्वभाव के गम्भीर हैं, मितभाषी है तथा गहन–गूढ़ बात ही करते हैं। उन्हें घर–गृहस्थी में कोई आकर्षण नहीं था। वह मधुर स्वर में भजन गाते है। उनका मानना है कि ईश्वर भक्ति से ही मानव जीवन के कष्ट कटते हैं। उनकी भाषा भी साधु–सन्तों के समान साधुक्कड़ी है––

(1) बच्चा गोवरधनदास, तू पच्छिम की ओर जा और नारायणदास पूरब की ओर जाएगा।

(2) बच्चा बहुत लोभ मत करना।

(3) देख, कुछ भिच्छा–उच्छा मिले तो ठाकुर जी को भोग लगे। और क्या।

(4) नहीं बच्चा हम इतना, समझाया नहीं मानता, हम बूढ़े भये, हम को जाने दे।

5. **दयालु** : यद्यपि महन्त जी सांसारिकता के मोह में ग्रस्त नहीं है तो वह अपने शिष्यों के प्रति शुभ के भाव अवश्य रखते हैं ओर उनके दुःख के समय में सामान्य मानव और परोपकारी की तरह उनका साथ देते हैं। जब गोवर्धनदास अन्धेर नगरी के आकर्षण में उलझकर वहीं रह गया था तब उनहोंने उसे वह जगह छोड़ देने का सुझाव दिया था लेकिन उसे कदापि वहां से जाने के लिए विवश नहीं किया था क्योंकि मानवीय मूल्यों को समझते हुए अपनी सीमाओं को जानते थे। जब गोवर्धनदास मुसीबत में पड़ जाता है तब वह उसे बचाने आते हैं। उसकी जीवन रक्षा ही नहीं करते बल्कि मूर्ख राजा को भी फांसी के फंदे पर ला खड़ा करते हैं। अपने शिष्य के हितैषी होने के कारण ही उसे कहते हैं, ''मैं तो जाता हूं। पर इतना कहे जाता हूं कि कभी संकट पड़े तो हमारा स्मरण करना।''

6. **चतुर** : महन्त जी दुनियादारी नहीं जानते हैं। वह चतुर हैं। अपनी चतुराई के कारण वे अपने शिष्यों को भीख मांगने के लिए भिन्न–भिन्न दिशाओं में भेजते हैं। चतुराई के कारण ही वह अपने लालची चेले गोवर्धनदास के भविष्य को जान जाते हैं और चतुराई के कारण ही उसे फांसी के फंदे से बचा लेते हैं। वह चतुर थे तभी तो वह चौपट्ट राजा को फांसी के फंदे तक पहुंचाने में सफल हुए थे।

7. **निर्भय और साहसी** : महन्त जी निडर हैं । उनमें अपार आत्मिक बल विद्यमान है। इसी कारण उन्हें न तो किसी से भय है और न ही कोई संकोच। जब उनका शिष्य गोवर्धनदास को फांसी के फंदे पर लटकाया ही जाने वाला था तब सिपाहियों से बिना डरे हुए उन्होंने अपने शिष्य से बात ही नहीं की थी बल्कि उन सिपाहियों से भी डांट भरे स्वर में बात की थी, **''भौं चढ़ाकर सिपाहियों से। सुनो, मुझ को अपने शिष्य को अन्तिम उपदेश देने दो, तुम लोग तनिक किनारे हो जाओ, देखो मेरा कहना न मानोगे तो तुम्हारा भला न होगा।''**

8. **संयमी** : महन्त जी का जीवन पूर्ण रूप से संयम द्वारा परिचालित है। उनके अपने मन और इन्द्रियों पर नियन्त्रण है। उनकी भावनाएं और इच्छाएं नियन्त्रण से बाहर नहीं जा पाती। उनका चेला गोवर्धन दास बहुत–सी मिठाई लेकर उनके पास पहुंचता है तो वह प्रसन्न होते हैं लेकिन जब उन्हें अन्धेर नगरी ओर चौपट्ट राजा के बारे में पता लगता है तो वह झट से उस नगर को छोड़कर कहीं और चले जाने का निर्णय ले लेते हैं। यदि वह संयमी न होते तो वह भी अपने चेले की तरह वहीं रहकर जीवन को सुखमय बनाने का सपना देखते। संयमी होने के कारण ही वह अपने चेहरे पर किसी ऐसे भाव को नहीं आने देते जिससे सिपाही यह जान पाते कि वह अपने शिष्य को फांसी से बचाने के लिए नाटक रूप कर रहे हैं।

9. **वाक् पटु** : महन्त जी में वे सभी विशेषताएं विद्यमान हैं जो सामान्य साधु–संतों में होती हैं। उनमें हर अवसर

पर कही गा सकने वाली सूक्तियां, पद, दोहे आदि कण्ठस्थ हैं। जहां कहीं भी उन्हें अवसर मिलता है, वह उसे कह देते हैं तथा स्थिति को गम्भीर और ज्ञान से पूर्ण कर देते हैं। चौपट्ट राजा के फांसी के फंदे पर खड़े होने पर भी वह कह देते हैं––

जहां न धर्म न बुद्धि नहिं नीति न सुजन समाज।

ते ऐसे हि आपुहि नसैं, जैसे चौपट राजा।।

वस्तुतः महन्त जी अनेक विशेषताओं के स्वामी जी हैं जिन्होंने कथा का प्रवाह देने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। चाहे लेखक का मूल मन्तव्य चौपट्ट राजा के माध्यम से तत्कालीन परिवेश और भ्रष्ट शासन पद्धति को व्यंजित करना था तो भी महन्त जी के चारित्रिक विकास में वह ऐसा कर पाने में सफलता पा गए हैं। महन्त जी के चरित्र में ठोस पात्र बनने की पात्रता निश्चित रूप से विद्यमान् है।

प्रश्न 6 'अन्धेर नगरी' के आधार पर गोवर्धन दास का चरित्र–चित्रण कीजिए।

उत्तर – भारतेन्दु कृत हास्य नाटक 'अन्धेर नगरी' के प्रमुख तीन पात्रों में गोवर्धन दास एक महत्त्वपूर्ण पात्र है जिसकी कल्पना मुख्य उद्देश्यों को गति देने में की गई है। वह तत्कालीन ही नहीं बल्कि समकालीन ढोंगी साधु–सन्तों का भी प्रतिनिधित्व करता है और नाटक को यथार्थवादी रूप देने में सहायता देता है। वह भगवा वस्तु और कमण्डल इसलिए धारण नहीं करता कि वह भगत है बल्कि इसलिए करता है कि बिना कुछ काम किए हुए मजे से पेट भर सके। उसे समाज के किसी वर्ग के प्रति कोई चिन्ता नहीं है, वह तो हरदम अपने सुख और एशोआराम के बारे में ही सोचता है। उसकी चारित्रिक विशेषताओं को निम्नलिखित आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है––

1. **लोभ–प्रवृत्ति** : गोवर्धनदास लालाची और लोभी प्रवृत्ति का साधु है। सच्चा साधु लोभ–प्रवृत्ति में नहीं पड़ता जबकि ढोंगी साधु लोभ ही करता है। महन्त जी उसे भिक्षा लाने के लिए कहते हैं ताकि शालिग्राम जी का बाल भोग सिद्ध हो सके लेकिन वह अधिक से भीख पाना चाहता है ताकि वह अच्छा खा सके। वह स्पष्ट शब्दों में कहता है, **''गुरु जी मैं बहुत–सी भिक्षा लाता हूं। यहां के लोग तो बड़े मालदार दिखाई पड़ते हैं। आप कुछ चिन्ता मत कीजिए।''** महन्त जी के द्वारा लालच न करने का उपदेश देने पर भी वह भीख में सात पैसे इकट्ठे करता है और उससे साढ़े तीन सेर मिठाई खरीदता है, खाता है ओर अपनी लालची प्रवृत्ति प्रकट करता है।

2. **अविश्वासी** : गोवर्धन दास स्वभाव का अविश्वासी और अस्थिर है। बाज़ार में सामान बेचने वाले सभी गला फाड़–फाड़ कर चिल्ला रहे थे कि हर सामान टके सेर है लेकिन फिर भी उसे विश्वास नहीं होता कि वह ठीक कह रहे हैं इसलिए वह बनिया, कुंजड़िन, हलवाई आदि सब के पास जाकर पूछता है कि क्या वास्तव में ही सब चीज़ें टके सेर की बिक रही हैं ?

3. **जिह्वा–लोलूप** : गोवर्धन दास पेटू है। उसे सिवाय खाने और जीवन में सुख उपभोग के कुछ नहीं सूझता। ऐसा लगता है कि जैसे उसका जीवन केवल खाने के लिए ही हुआ है। इसीलिए वह मिठाई खाते हुए प्रसन्नता में भर कर गाता है और बगल बजाता है। जब महन्त जी ने उसे वह स्थान छोड़ देने के लिए कहा था तो उसने ऐसा करने से मना कर दिया था। वह वहीं रहना चाहता था जहां उसे बिना परिश्रम किए हुए हर रोज खाने को मिठाई मिले

   वह कहता भी है––

   ''गुरु जी ने हम को नाहक यहाँ रहने को मना किया था। माना कि देस बहुत बुरा है, पर अपना क्या ?

अपने किसी राजकाज में थोड़े हैं कि कुछ डर है, रोज मिठाई चाभना, मजे में आनन्द से राम भजन करना।''

4. **अवज्ञाकारी** : गोवर्धनदास पेट के सुख के लिए कुछ भी करने को तत्पर रहता है। उसके गुरु जी ने अपने विवेक का परिचय देते हुए उसे सलाह दी थी कि वह अन्धेर नगरी को छोड़कर उसके साथ अन्यत्र चले लेकिन पेटू गोवर्धनदास ने उनके साथ जाने से इन्कार कर दिया था। उसे लगा था कि कहीं और जाने से उसे खाने के लिए अच्छा भोजन ओर मिठाई नहीं मिल पायेगी। उसने गुरु जी से साफ शब्दों में कह दिया था––

गुरु जी, ऐसा तो संसार–भर में कोई देस ही नहीं है। दो पैसा पास रहने से ही मजे में पेट भरता है। मैं तो इस नगरी को छोड़कर नहीं जाऊँगा। और जगह दिन भर मांगों तो भी पेट नहीं भरता। वरचं बाजे–बाजे दिन उपास करना पड़ता है। सो मैं तो यही रहूंगा।

गोवर्धनदास घर बाहर त्याग चुका था। इसलिए उसका महन्त जी के अतिरिक्त अपना और कोई नहीं था लेकिन उसने उनकी आज्ञा को भी मानने से मना कर दिया था। आज्ञा न मानने के कारण उसे पछताना पड़ा था।

5. **भीरु** : गोवर्धनदास स्वभाव से डरपोक और भीरु है। वह शरीर से तो भारी है। लेकिन मन से कमज़ोर हैं और विपरीत परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाने पर वह उनका सामना नहीं कर पाता और वह स्वयं को असहाय अवस्था में मानने लगता है। उसमें साहस की कमी है। विरोध की क्षमता न होने के कारण ही वह राजा चौपट्ट के चार प्यादों से अपनी रक्षा नहीं कर पाया था। उन चार प्यादों से यह जान कर कि उसे फांसी पर लटकाया जाएगा, वह भय से कांप उठा था, **''फाँसी! अरे बाप रे फाँसी! मैंने किस की जमा लूटी है कि मुझ को फाँसी। मैंने किस के प्राण मारे कि मुझ को फाँसी।''** वह उन प्यादों के सामने रोता है, गिड़गिड़ाता है लेकिन बचने की न तो उसे कोई युक्ति सूझती है और न ही वह कोई तर्क दे पाता है। संकट की घड़ी में उसे बस अपने गुरु ही याद आते हैं।

6. **ढोंगी साधु** : गोवर्धनदास न तो साधु है और न ही कोई महात्मा। वह तो मात्र पेट भरने के लिए साधुओं का ढोंग करने वाला है। उसके भगवे वस्त्र और कमण्डल केवल दिखावे के लिए हैं। उसका ज्ञान और अध्ययन थोथा है। महन्त जी के समान उसे पद, दोहे, सूक्तियां आदि याद नहीं है। वह जंगलों–पहाड़ों में अकेले रहकर तपस्या करने की बजाय गली बाज़ारों में भटकता फिरता है ताकि पेट की आग को बुझा सके। अन्धेर नगरी के वैभव को देख कर वह सब कुछ भूल जाता है–– उसे अपने गुरु की याद नहीं रहती। उसे केवल टके सेर वाली मिठाइयां दिखायाी देती हैं जिन्हें खा–खाकर वह मोटा हो जाता है और वही मोटापा उसे फाँसी के फंदे तक ले जाता है। भगवान के भजन के नाम पर कीर्तन करना उसका पेशा है, न कि स्वभाव। उसका स्वभाव तो ढोंगी साधुओं की तरह खाना, डकारना और सोना है। वह वर्ग विशेष का प्रतिनिधि है इसलिए भारतेन्दु ने उसमें उन सभी गुणों–अवगुणों को प्रकट किया है जो तब और अब के साधुओं में दिखायी देते हैं।

7. **आत्मकेन्द्रित** : गोवर्धनदास पूर्ण रूप से आत्मकेन्द्रित है। वह केवल अपने बारे में ही सोचता है। उसके लिए गुरु, राजा, समाज, परिवार आदि सब व्यर्थ है। उसके लिए यदि कुछ भी महत्त्वपूर्ण है तो वह अपने शरीर की रक्षा करना है। आत्मकेन्द्रित होने के कारण ही वह अकेला चोपट्ट राजा की अन्धेर नगरी में रहने का निर्णय करता है। आत्मकेन्द्रित होने के कारण ही वह सदा अपने सुख की बात सोचता है।

8. **असंयमी** : गोवर्धन दास में एक गुण अवश्य विद्यमान है कि वह अपने द्वारा किए जाने वाली गलती को स्वीकार कर लेता है। जब अपने गुरु जी की आज्ञा को न मानकर वह अन्धेर नगरी में रह जाता है और मिठाई खा–खाकर मोटा हो जाता है तब राजा के प्यादे उसकी मोटी गर्दन को फंदे में फंसाने के लिए ले जाने लगते है।

तो वह पश्चाताप करता है। अपने जीवन पर आए संकट को देखकर वह रोता है, चिल्लाता और गिड़गिड़ाता है। तब वह कहता है, **''हाय ! मैंने गुरु जी का कहना न माना, उसी का यह फल है। गुरु ने कहा था कि ऐसे नगर में नहीं रहना चाहिए, यह मैंने न सुना ! अरे ! इस नगर का नाम ही अन्धेर नगरी और राजा का नाम चौपट्ट है, तब बचने की कौन सी आशा है। अरे ! इस नगर में ऐसा कोई धर्मात्मा नहीं है। जो इस फकीर को बचाएं। गुरु जी ! कहां है ? बचाओं –गुरु जी–गुरु जी।''** वास्तव में उसका पश्चाताप भी उसकी आत्मकेन्द्रित प्रवृत्ति का परिचायक है।

वस्तुतः गोवर्धनदास का चारित्रिक विकास कथावस्तु के विकास में सहायक है। लेखक ने नाटक के उद्देश्य की प्रस्तुति के लिए ही उसे नियोजित किया है लेकिन उसके माध्यम से आज के युग के हज़ारों लाखों भगवा धारण किए साधुओं की पोल खोलने में उन्हें पूर्ण सफलता मिली है। यह युग सापेक्ष है इसलिए इसकी प्रासंगिकता बनी हुई है।

प्रश्न 7. 'अन्धेर नगरी' नाटक के आधार पर चौपट्ट राजा का चरित्र–चित्रण कीजिए।

उत्तर – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने चौपट्ट राजा के माध्यम से तत्कालीन रजवाड़ों के शासकों के चरित्र को अतिरंजित और अस्वाभाविक ढंग से प्रकट करने का प्रयास 'अंधेर नगरी' में किया है। बिहार के किसी रजवाड़े को संकेत कर के चौपट्ट राजा के चरित्र को गढ़ा गया है। जिसके द्वारा वह तत्कालीन कुछ मूर्ख शासकों की मूढ़ता, दुराचरण, नशे की प्रवृत्ति, विवेकहीनता, अन्याय, दण्ड विधान, सनकी ओर झक्की स्वभाव को प्रकट कर सके। इसके माध्यम से अंग्रेजी शासन के भ्रष्ट व्यवहार, अन्याय, शासन व्यवस्था आदि को भी प्रतीकात्मक शिकार बनाया गया है। चौपट्ट राजा वर्ग पात्र है इसलिए अपने वर्ग को अन्य लोगों की अच्छी–बुरी आदतों और स्वभाव को प्रकट करने का वही आधार है। वही इस नाटक का मुख्य पात्र है और उसी की गतिविधियों को प्रकट करने के लिए इसकी कल्पना की गई है। नाटक के आधार पर चौपट्ट राजा की चारित्रिक विशेषताएं निम्नलिखित हैं––

1. **विवेकहीनता** : चौपट्ट राजा मूर्ख है, विवेकहीन है तथा उसमें सामान्य स्तर की बुद्धि का भी अभाव है। वह किसी भी प्रकार से सामान्य नहीं है। उसे अच्छे–बुरे, पाप–पुण्य, दोषी–निर्दोषी, अपने–पराए का ज्ञान नहीं है। उसे जो कुछ भी कोई दूसरा व्यक्ति कह देता है वह उसे मान लेता है। वह हर बात पर दूसरों की बुद्धि का सहारा लेखा है। कल्लू बनिए की दीवार गिरने से किसी व्यक्ति की बकरी उसके नीचे कुचली गई और मर गई । मन्दबुद्धि राजा दीवार को ही दरबार में पेश करने का आदेश देता है। दीवार के भाई , पुत्र, दोस्त और सगे–सम्बन्धियों को वह वहां बुलाना चाहता है। इसी संदर्भ में वह कल्लू बनिए , कारीगर, चूने वाला , भिश्ती, कसाई और कोतवाल को दरबार में बुलाया जाता है और निरपराध कोतवाल को फाँसी की सज़ा सुना दी जाती है क्योंकि सभी अपना–अपना अपराध दूसरों के सिर मड़ते जाते हैं। मूर्ख और अविवेकी राजा अपनी मूर्खता का परिचय देते हुए अन्त में स्वयं ही फाँसी के फंदे पर जा खड़ा होता है ताकि वह उस घड़ी मृत्यु प्राप्त कर स्वर्ग जा सके।

2. **नशेबाज** : चौपट्ट राजा नशा करने वाला व्यक्ति है। नशे में चूर होने की अवस्था में उसे कुछ भी अच्छा–बुरा नही सूझता। दरबार में वह नशे की अवस्था में विराजमान है और तब भी बार–बार शराब पीना चाहता है। राज सभा में जब एक नौकर उसे पान देना चाहता है तो नशे के कारण वह नहीं समझ पाता कि वह क्या चाहता है। नशा मानव–बुद्धि को कुण्ठित कर देता है। इस अवस्था में उसकी इन्द्रियां ठीक प्रकार से काम नहीं कर पातीं। वह कहना कुछ चाहता है और कहता कुछ है। शराब के नशे में चौपट्ट राजा बकरी को बरकी, लरकी, कुबरी आदि नामों से पुकारता है। वह कल्लू को मल्लू कहता है। तो चूने वाले चुन्नीलाल और खैर–सोपाड़ी चूने वाला कह कर पुकारता है। कहीं–कहीं तो वह पूरा–पूरा वाक्य ग़लत बोल जाता है। क्योंकि नशे ने उसकी बुद्धि कुण्ठित कर दी है। जैसे––

(क) **क्यों बे भिश्ती ! गंगा–जमुना की किश्ती ! इतना पानी क्यों दिया कि इसकी बकरी गिर पड़ी और दीवार दब गई ?**

(ख) कयों बे कोतवाल ! तैने सवारी ऐसी धूम से क्यों निकाली कि गडरिए ने घबराकर बड़ी भेड़ बेची जिससे बकरी गिर कर कल्लू बनिया दब गया ?

3. **निर्णय विहीनता** : चौपट्ट राजा मूर्ख है और उसकी अपनी बुद्धि काम नहीं करती इसलिए वह मन्त्रियों के हाथ की कठपुतली है। वह उसे जैसे नचाना चाहते हैं वह वैसे ही नाचता है। मंत्री के मुख से निकली बात ही वह पूरी करता है। नाटक में गडरिए की बात सुनकर जब मन्त्री को लगता है कि मूर्ख राजा सारे नगर को ही कहीं फूंक देने या फाँसी पर लटका देने का आदेश न दे दे तो उसका पूरा ध्यान कोतवाल की ओर मोड़ देता है जिस कारण कोतवाल को फाँसी की सज़ा सुना दी जाती हैं

4. **अव्यवहारिकता** : राजा चौपट्ट पूर्ण रूप से अव्यवहारिक है। वह नहीं जानता कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। वह उल्टी–सीधी बातें करता है, तर्कहीन संवाद रचता है, मूर्खों सी चेष्टाएं करता है और तरह–तरह की मुख मुद्राएं बनाता है। अपनी अव्यवहार कुशलता के कारण ही वह स्वयं को फाँसी के त़ख्ते पर खड़ा कर देता है। उसके व्यवहार और स्वभाव को कोई नहीं समझता।

5. **अव्यवस्था** : किसी भी राज्य में राजा को ही न्याय – अन्याय का निर्णय करना होता है लेकिन चौपट्ट राजा को न्याय–अन्याय की कोई समझ नहीं है। एक तो वह मूर्ख है और दूसरा सदा शराब के नशे में चूर रहता है––एक करेला दूसरा नीम चढ़ा। बकरी मरी दीवार गिरने से और फाँसी की सज़ा सुनाई गई कोतवाल को। कोतवाल को इसलिए छोड़ दिया गया कि उसकी गर्दन पतली है जो फाँसी के फंदे में नहीं आती और बेकसूर गोवर्धन दास को फाँसी पर इसलिए लटकाने का निर्णय किया गया क्योंकि उसकी गर्दन मोटी है और फंदे में पूरी आ जाती है। नगर के लोग उसकी न्याय व्यवस्था से सदा डरते रहते हैं क्योंकि कोई नहीं जानता कि कब उन पर मुसीबत आ जाए। एक प्यादा गोवर्धनदास को इस विषय में कहता है, **''नगर भर में राजा के न्याय के डर से कोई मुटाता ही नहीं।''**

चौपट्ट राजा का न्याय किसी भी प्रकार से ठीक नहीं है।

6. **अशिष्टता** : चौपट्ट राजा को छोटी–छोटी बात पर अकारण गाली दने की आदत है। गुस्से में ही नहीं बल्कि सामान्य और सहज स्थिति में भी वह गाली देता रहता है। अपने नौकर को वह दुष्ट, लुच्चा, पाजी आदि गालियां देता है जबकि उसका दोष नहीं था। बिना किसी कारण वह उसे कोड़ों की सज़ा सुना देता है।

7. **डरपोक** : चौपट्ट राजा बहुत डरपोक है। वह तो अपने साये से भी डरने वाला है। राजसभा में जब एक सेवक ने उसे चिल्ला कर कहा था, ''पान खाइए, महाराज !'' तो वह यह समझकर सुपनखा आई है––अपना सिंहासन छोड़ कर भाग खड़ा हुआ था और मन्त्री ने उसे समझा कर वापिस उसके स्थान पर बिठाया था।

8. **अन्धविश्वासी** : चौपट्ट राजा अन्धविश्वासी है। अन्धविश्वास के कारण ही वह फाँसी के फंदे पर अपनी इच्छा से चला गया था। महन्त जी द्वारा बताई गई शुभ घड़ी में मृत्यु को प्राप्त कर के वह बैकुण्ठ की कामना करता है और मंत्री, कोतवाल आदि से स्पष्ट शब्दों में कह देता है, **''चुप रहो, सब लोग। राजा के आछत और कौन बैकुण्ठ जा सकता है। हम को फाँसी चढ़ाओं जल्दी, जल्दी।''**

वास्तव में राजा चौपट्ट मूर्ख और अविवेक है जिस कारण अन्य सभी दुर्गुण उसमें अपने आप ही आ मिले हैं। उसे किसी भी प्रकार समाज के लिए उपयोगी पात्र नहीं माना जा सकता। उसकी सृष्टि तो मात्र विशेष उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए की गई है।

प्रश्न 8. ''अन्धेर नगरी एक सफल प्रहसन है'' कथन की समीक्षा कीजिए।

उत्तर – भारतीय काव्य शास्त्र में नाटक में प्रहसन का महत्त्वपूर्ण स्थान है जिसे शुद्ध और संकीर्ण नाटक नामक दो उपभेदों में बांटा जाता है। शुद्ध प्रहसन में भगवत्, तापस, भिक्षु , क्षत्रिय आदि का किसी पाखण्डी या नीच व्यक्ति के द्वारा परिहास किया जाता है। जबकि संकीर्ण प्रहसन में वेश्या , धूर्त, दुराचारी आदि के अशिष्ट वेष, चेष्टा, भाषा आदि का अभिनय दिखाया जाता है। इस आधार पर अन्धेर नगरी संकीर्ण प्रहसन है। जिसका मुख्य पात्र चौपट्ट राजा शराबी, कामी, मूर्ख और दुराचारी है। वह अपनी भाषा, हाव–भाव और आचरण से हास्य की सृष्टि करता हैं इसलिए वह हास्य रस का आलम्बन है।

'अन्धेर नगरी' नाटक सन् 1881 ई॰ में लिखा गया था और तब अभिमंचित भी किया गया था। सन् 1960 में इस प्रहसन के रूप में मंचित किया गया था और डॉ॰ लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने इसे सामान्य प्रहसन और निरुद्देश्य रचना मानकर इसकी समीक्षा की थी। तब उन्होंने इसका उद्देश्य रचना मान कर इसकी समीक्षा की थी। तब उन्होंने इसका उद्देश्य हास्य–विनोद माना था लेकिन वास्तव में हास्य–प्रधान दीखने वाले नाटक में तीखे व्यंग्य हैं लेकिन ये व्यंग्य इतने चुभने वाले नहीं हैं जितने बंगला नाटककार माइकेल के थे। भारतेन्दु के युग में प्रहसन लिखने का प्रचलन था क्योंकि उस समय की मांग ही ऐसी थी। पारसी थियेटर की चुनौती का सामना इससे किया जा सकता था। नाटकों में हास्य की सृष्टि करने के लिए ज़िन्दादिली, सहज बोध, लोक चेतना के साथ जिस झनझना देने वाली शैली की आवश्यकता होती है वह भारतेन्दु में थी इसलिए उन्होंने समाज की कुरीतियों और शासन की व्यवस्था को मीठे व्यंग्य की औषध देकर उसका उपचार करने का प्रयत्न किया था 'अन्धेर नगरी' के कथानक, प्रतिपाद्य विषय, पात्र–संरचना, चरित्र–चित्रण, भाषा, संवाद आदि के अध्ययन से स्पष्ट ज्ञात होता है कि यह एक प्रहसन ही है।

अन्धेर नगरी का कथानक कल्पित है जिसमें पुरानी उक्ति 'अन्धेर नगरी चौपट्ट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा' के आधार बना कर नई कथावस्तु को प्रस्तुत किया है। इसके पात्र वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करने वाले हैं। इसकी घटनाएं मात्र हास्य की सृष्टि ही नहीं करती बल्कि यथार्थ का चित्रण भी करती हैं। पात्रों के कार्यों, संवादों, आचरण, व्यवहार, हाव–भाव आदि सबके द्वारा समाज का परिहासपूर्ण चित्र प्रस्तुत किया गया है। प्रहसन की मूल संवेदना के अनुसार भाषा और संवादों का प्रयोग किया गया है जिससे व्यंग्य और कटाक्ष ने प्रहसन को तीखापन दिया है।

'अन्धेर नगरी' अनपढ़ और अपरिष्कृत रुचि वाले लोगों को नज़र में रखकर लिख गया था इसलिए इसमें अलंकृत और तत्सम् शब्दावली का अभाव है। सीमित शब्द ज्ञान वालों के लिए बोलचाल की भाषा ही श्रेष्ठ होती है इसलिए भारतेन्दु ने उनके स्तर की भाषा का ही प्रयोग इसमें किया था। इस नाटक की कथावस्तु भी इस प्रकार की है जो अशिक्षित और अपरिष्कृत रुचि वालों के लिए अनुकूल है। महन्त जी, उनके चेले, मन्त्री, कोतवाल आदि सभी पात्र उनके स्तर के ही चुने गए हैं। इसमें हास्य को इतना महत्त्व नहीं दिया गया जितना व्यंग्य को। लेकिन फिर भी हास्य कहीं नाटक से ओझल भी नहीं हुआ। पहले दृश्य से हास्य आरम्भ हो जाता है और चौथे अंक तक पहुंचते–पहुंचते वह बढ़ जाता है। राजा की भाषा, तर्कविहीन बातें, मुद्राएं और चेष्टाएं सभी मिलकर हास्य की सृष्टि करते हैं। तरह–तरह की तुक बन्दियां, बोलचाल की उक्तियां, मुहावरे और शाब्दिक विडम्बना हास्य की सृष्टि करने में समर्थ हुई है। बकरी को बरकी, कुबरी तथा कल्लू को मल्लू कह कर हास्य की सृष्टि करने का प्रयास किया गया है। चूने वाले को ख़ैरसुपाड़ी चूने वाले तथा चुन्नीलाल कहना हास्य उतपन्न करता है। वह ऐसे–ऐसे वाक्यों को प्रस्तुति करता है जो दर्शक और पाठक को हंसने पर विवश कर देता है। राजा का फरियादी से यह कहना कि तुम्हारा न्याय यहाँ ऐसा होगा कि जैसा जम के यहां भी नहीं होगा––जाने अनजाने भावी घटना की ओर संकेत कर जाती है और हास्य को भी उत्पन्न करती है।

भारतेन्दु ने अपने समाज में विद्यमान् जातिभेद, छूआछूत पर नाटकीय ओर व्यंग्यात्मक प्रहार किया है। जातिवाद और धर्म–स्थलों में फैले भ्रष्टाचार को उन्होंने निशाना बनाया है––

ऐसी जात हलवाई जिनके छत्तीस कौम हैं भाई।

जैसे मन्दिर के भितरिए, वैसे अन्धेर नगरी के हम।

लेखक ने बनियों, ब्राह्मणें, महाजनों आदि समाज के ठेकेदारों की व्यंग्य के द्वारा पोल खोलने में सफलता प्राप्त की है। वह मानता है कि ब्राह्मण जाति–पाति को भी टके सेर बेचने को सदा तैयार रहते हैं––वे भी व्यापारी बन गए हैं। पैसे के लिए कुछ भी करने को तैयार हैं। देश वासियों के नैतिक पतन, आपसी वैर–भाव, झूठी मर्यादा, जाति–पाति आदि कुछ भी भारतेन्दु के तीखे व्यंग्य से नहीं बच पाता है। नाटक के विभिन्न लोगों पर व्यंग्य किया है तथा तत्कालीन देशी राजाओं के दिमागी दिवालिए पन तथा उनकी न्याय व्यवस्था पर हास्य–व्यंग्य की सृष्टि की है–

जैसा काजी वैसा पाजी, रैयत राजी पके सेर भाजी। चूरन बेचने वाला तत्कालीन समाज के विभिन्न पात्रों को अपने व्यंग्य का शिकार बनाता है––

चूरन साहेब लोग जो खाता

सारा हिन्द हज़म हो जाता।

चूरन हकिम सब जो खाते

सब पर दूना टिकस लगाते।

'अन्धेर नगरी' में सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक स्थितियों के व्यंग्यात्मक उक्तियों की भरमार है लेकिन ये व्यंग्य कटु और प्रत्यक्ष नहीं हैं। ये रोचक हैं, पाठक/दर्शक को लुभाते हैं, उसे हंसाते हैं। नाटक में निहित व्यंग्य शिष्ट है। उसमें कहीं भी फूहड़ता और नंगापन नहीं है।

यह कहना पूर्ण रूप से उचित है कि भारतेन्दु का 'अन्धेर नगरी' हास्य व्यंग्य प्रधान नाटक है जिसकी प्रासंगिकता वर्तमान में भी उतनी ही अधिक है जितनी उस समय में थी।

प्रश्न 9. समकालीन संदर्भ में 'अन्धेर नगरी' की प्रांसगिता प्रतिपादित कीजिए।

उत्तर – व्यक्ति का मूल स्वभाव और प्रवृत्तियाँ हरयुग में एक–सी ही रही हैं। सतयुग में भी कलयुगी स्वभाव वाले थे और कलयुग में भी सतयुगी स्वभाव वाले सज्जन मिल जाते हैं। अच्छे–बुरे लोगों का संख्यात्मक अनुपात कम–अधिक हो सकता है पर यह नहीं हो सकता कि किसी युग में उन्हें आधार बनाकर लिखा गया साहित्य दूसरे समय या स्थान के लिए अनुपयोगी हो। साहित्य तो कालजयी होता है और फिर भारतेन्दु के साहित्य के सन्दर्भ तो वही हैं जो हमारे आज के समय के हैं। राजनीतिक स्थितियाँ अवश्य बदली हैं और इस कारण कुछ सामाजिक आर्थिक और धार्मिक आधार परिवर्तित हुए हैं––शेष सब कुछ वैसा ही है, इसलिए 'अन्धेर नगरी' पूर्ण रूप से समकालीन सन्दर्भ में प्रासंगिक है, जिसे निम्नलिखित आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है––

1. **राजनीतिक संदर्भ** : भारतेन्दु ने चौपट्ट राजा के माध्यम से राजनीतिक भ्रष्टता, अदूर दृष्टि और कौशल हीनता को प्रकट किया था।। वर्तमान संदर्भ में भी उनके राजनीतिज्ञ, सरकारी वर्ग के अधिकारी और उच्च पदों पर आसीन मठाधीश इसी वर्ग से सम्बन्धित हैं। उनके द्वारा किए गए मूर्खतापूर्ण कार्य भी गुमराह जनता के लिए आदर्श बन जाते हैं जनता के किसी छोटे से वर्ग की मूर्खता भरी स्वीकृति को प्राप्त कर वे स्वयं को सर्वज्ञ, श्रेष्ठतम और पथ प्रदर्शक मानने लगते हैं। जिन लोगों पर इनकी छत्र छाया होती है वे अकारण ही समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त कर लेते हैं। अच्छे और सच्चे लोग दर–दर की ठोकरें खाते हैं, अपमानपूर्ण जीवन जीते हैं, भूखे–प्यासे घूमते हैं और राजनीति का संरक्षण पाने वाले लोग इनके सिर पर सवार हो जाते हैं। ऐसे ही लोग समाज में सम्मान पाते है और उन्हें ही ऊँचे पद प्राप्त हो जाते हैं। आज भी अनेक राजनेता अन्धेर नगरी के मूर्ख विवेकहीन और धोखेबाज लोग बाहर से तो सभ्य और भले प्रतीत होते हैं। लेकिन वे मन के कपटी हैं। वे दिखाई

देने में कुछ है और उनकी वास्तविकता कुछ और ही है। वे अत्यन्त शक्ति सम्पन्न और प्रभावशाली प्रतीत होते हैं। उन्हें ही ऊँचे–ऊँचे पद प्रदान किए जाते हैं। जो कोई सत्य के मार्ग पर आगे बढ़ना चाहता है उसे तो जूते खाने पड़ते हैं। वे तरह–तरह के अमानवीय कष्ट सहते हैं। राजनीतिज्ञों की चालों के कारण बेईमान और झूठे तो ऊँची–ऊँची पदवियां प्राप्त कर लेते हैं। इस समाज में वही महान् है जो बड़ा धोखेबाज और दुष्ट है। यदि राजगद्दी पर बैठने वाले मूर्ख हों तो जनता पर उनकी मूर्खता का प्रभाव पड़ना आवश्यक है––

वेश्या जोरू एक समान। बकरी गऊ एक करि जाना।।

साँचे मारे मारे डोलै। छली दुष्ट सिर चढ़ि–चढ़ि बौलैं।।

प्रगट सभ्य अन्तर छलधारी। सोई राजसमां बल भारी।।

साँच कहै तो पनही खा वैं। झूठे बहु विधि पदवी पावैं।।

2. **नारी–दुर्दशा** : समाज में नारी की जो स्थिति भारतेन्दु के समय थी, वही अब भी है। समाज में अवारा और बदचलन लोग युवतियों पर बुरी दृष्टि डालते थे। पैसे और शक्ति के जाल में वे युवतियों को फँसाते थे। कुछ युवतियाँ भी तरह–तरह के मोह–जाल में युवकों को फँसाती थी। अब भी बिल्कुल वही है बल्कि पहले से कुछ अधिक बिगड़ी है––

मछरिया एक टके कै बिकाय।

लाख टका कै वाला जोवन, गाहक सब ललचाय।।

नैन मछरिया रूप जाल में, देखत ही फंसि जाय।।

बिनु पानी मछरी सो बिरहिया, मिलै बिना अकुलाय।।

पुरुष प्रधान समाज में नारी का स्थान उच्च नहीं था, वेश्यावृत्ति का बोलबाला था। घासी राम 'चने जोर गरम' बेचता हुआ बहुत सहजता से उस समय की प्रसिद्ध वेश्याओं के नाम लेता है–––

चना खायै तोकी, मैना। बोले अच्छा बना चबैना।।

चना खाय गफूस मुन्नी। बोलैं और नहीं कुछ सुन्नी।।

आज तो इस क्षेत्र में समाज की स्थिति और भी विकृत हो चुकी है। तब भी नारियाँ पुरुषों के समान व्यापार में सहयोग देती थी और अब भी ऐसा ही है।

3. **विषम सामाजिकता** : भारतेन्दु ने 'अन्धेर नगरी' में तत्कालीन सामाजिक मूल्यों के हनन का व्यंग्यात्मक शैली में वर्णन किया है। अंग्रेज़ी शासन–व्यवस्था में पाप–पुण्य, अच्छा बुरा, सदाचार–दुराचार आदि की परिभाषा बदल गई थी। समाज में इतनी गिरावट आ गई थी कि लोगों की दृष्टि में पत्नी और वेश्या में कोई अन्तर ही नहीं बचा था। मूर्खता और विवेक हीनता ने सामाजिक मूल्यों को बदल दिया था। लोगों की नज़र में गाय और बकरी समान महत्त्व के थे। सच्चे और अच्छे लोग दर–दर की ठोकरें खाते थे और दुष्ट सब के सिर पर सवार रहते थे। दुष्ट लोग सभ्य और अच्छे लोगों को अपमानित करते थे। समाज में वही श्रेष्ठ माना जाता था। जो दुष्ट और धोखे बाज था। सब ओर अन्धेर मचा हुआ था। शासक तो नाममात्र के थे। सारा अच्छा–बुरा काम तो कर्मचारी ही करते थे––

छलियन के एका के आगे। लाख कहौ एकहु नहिं लागे।

भीतर होइ मलिन की कारों। चाहिए बाहर सा चर कारो।।

धर्म अधर्म एक दरसाई । राजा करे सो न्याव सदाई ।।

भीतर स्वाहा बाहर सादे । राज करहि अगले अरु प्यादे ।।

वर्तमान में भी स्थिति वही है । सामाजिक मूल्य निरन्तर बदलते जा रहे हैं । लोगों की करनी कथनी में अन्तर है । धोखा–फरेब करने वालों ने सभी स्थानों पर एकाधिकार जमा रखा है, और वे किसी भी स्थिति में अपने आप को बदलने को तैयार नहीं हैं । मन के काले, धोखेबाज़ और दुष्ट स्वभाव के लोगों के हृदय में कोमल–भाव नहीं है । शासक वर्ग और कर्मचारी बाहर से तो सादे और भले लगते हैं पर मन के काले है ।। उनका आचरण अच्छा नहीं है, वे अत्याचारी और अन्यायी हैं । अफ़सरों के नाम पर कर्मचारी भ्रष्टाचारी बने हुए हैं, वे मनमाना व्यवहार करते हैं ।

4. **अधिकारियों की लूटमार** : अन्धेर नगरी में भारतेन्दु ने अधिकारियों की लूटमार का वर्णन किया है । वे जनता को बिना किसी कारण तंग करते थे । वे रिश्वतखोर थे–

चूरन अमले सब जो खा वै ।

दूनी रिश्वत तुरन्त पचावैं ।

आज का हमारा युग तो रिश्वतखोरी से पूरी तरह त्रस्त है । बिना रिश्वत के कहीं–कोई काम ही नहीं होता । सरकारी कर्मचारी तब भी बेईमान थे और अब भी वैसे ही है । उनकी महत्ता भ्रष्टाचार पर ही टिकी हुई है–

(क) **चूरन पुलिस वाले खाते । सब कानून हज़म कर जाते ।।**

(ख) **जैसे काजी वैसे पाजी । रैयत राजी टके सेर भाजी ।।**

(ग) **चूरन अमले सब जो खावें । दूनी रिश्वत तुरन्त पचावै ।।**

भारतेन्दु के द्वारा जिस प्रकार का समाज चित्रित किया गया है, वैसा ही समाज अब भी है उसमें कोई सुधार नहीं हुआ, बल्कि कुछ बिगाड़ ही आया है ।

5. **जाति–पाँति और व्यवस्था–दोष** : 'अन्धेर नगरी' में धर्म के नाम पर ब्राह्मणों के द्वारा किए जाने वाले जनता के शोषण और आडम्बरों का वर्णन भारतेन्दु ने किया है । वे धर्म के ठेकेदार बनकर धर्म को भी व्यापार की वस्तु मानने लगे हैं । वे पैसे ले देकर किसी का धर्म परिवर्तित कराने को सदा तैयार रहते हैं । पैसा ही उनके लिए सब कुछ है––

'जात लें जात, टके सेर जात । एक टका दो हम अभी अपनी जात बेचते हैं टके के वास्ते ब्राह्मण से धोबी हो जाएं और धाबी को ब्राह्मण कर दें । टके के वास्ते जैसी कहो वैसी व्यवस्था दें । टके के वास्ते झूठ को सच करें टके के वास्ते ब्राह्मण से मुसलमान, टके के वास्ते हिन्दू से क्रिस्तान । टके के वास्ते धर्म और प्रतिष्ठा दोनों बेचें, टके के वास्ते झूठी गवाही दें । टके के वास्ते पाप को पुण्य मानें । टके के वास्ते नीच को भी पितामह बनावें । वेद, धर्म, कुल–मर्यादा, सचाई–बड़ाई सब टके सेर । लुटाय दिया अनमोल माल । ले टके सेर ।'

वर्तमान में भी विभिन्न धर्मावलम्बी अपने–अपने ढंग से लोगों को मुर्ख बना रहे हैं, समाज में अन्थविश्वास बढ़ा रहे हैं । धर्म का रास्ते उनके लिए व्यापार का रास्ता है । उनका काम ही ईश्वर के नाम का व्यापर करना है । चौपट्ट राजा अन्धविश्वास के कारण अपने आप फाँसी के फंदे पर झूल गया था और वर्तमान में भी न जाने कितने लोग धर्म के नाम पर अपना काम–धन्धा छोड़ जीवन की जिम्मेदारियों से मुँह मोड़ लेते हैं ।

तभी भी समाज धर्म के आधार अनेक भागों में बंटा हुआ था और अब भी बंटा हुआ—'ऐसी जात हलवाई छत्तीस कौम हैं भाई !' धर्म के नाम पर धार्मिक स्थलों पर ही दुराचार होता है—'मन्दिर के भितरिए वैसे अन्धेर नगरी के हम।' वैसा ही अब भी चल रहा है। समाचार—पत्र ऐसे ही समाचारों से रोज भरे दिखाई देते हैं। आज के अधिकांश धार्मिक ठेकेदारों का जीवन—दर्शन भी गोवर्धनदास जैसा है—''माना कि देश बहुत बुरा है। पर अपना क्या ? अपने किसी राज—काज में छोड़े हैं कि कुछ डर है, रोज़ मिठाई चाभना, मजे में आनन्द से राम भजन करना।''

वास्तव में हमारे देश की स्थितियां अब भी वैसी ही है जैसी 'अन्धेर नगरी' की रचना के समय थी। शासन तन्त्र में अन्तर अवश्य आया है पर उसकी कार्यविधि में अभी भी बहुत—कुछ समानताएँ हैं। व्यवस्था अभी भी भ्रष्ट है। सब तरफ अन्धेर गर्दी मची हुई है। न्याय व्यवस्था भ्रष्ट है। अयोग्य और बेईमान लोगों के द्वारा गद्दियां सम्भाली हुई हैं। समाज मूल्यहीन हो चुका है। धर्म के नाम पर राजनीति की जा रही है। सर्वत्र भ्रष्टाचार का बोलबाला है। पुलिस विभाग ठीक से अपना काम नहीं करता हैं कानून के रक्षक ही कानून के भक्षक बने हुए हैं। नेता विवेक हीन हैं तथा धर्म के ठेकेदार बेईमान हैं। यदि भारतेन्दु की 'अन्धेर नगरी' में थोड़ा —सा परिवर्तन कर दिया जाए तो यह समकालीन परिस्थितियों में पूर्णरूप में प्रासंगिक है। इसका औचित्य आज भी बना हुआ है।

प्रश्न 10. 'अन्धेर नगरी' के गीतों का औचित्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर — भारतेन्दु की 'अन्धेर नगरी' में कुल मिला कर छोटे—बड़े पाँच गीत हैं, जिन्हें नाटक की कथा को गति और स्पष्टता देने के लिए प्रयुक्त किया गया है। पारसी रंग मंच पर प्रस्तुत किए जाने वाले नाटकों में गीतों को प्रकट करने का प्रचलन था। मनोरंजन के साथ—साथ पात्रों की चारित्रिक विशेषताएं भी इनके द्वारा सरलता से दर्शकों—पाठकों के समक्ष उजागर हो जाती थी। भारतेन्दु और जयशंकर प्रसाद के नाटकों में इसीलिए गीतों की अधिकता दिखाई देती है। 'अन्धेर नगरी' में प्रयुक्त किए गए गीतों का औचित्य निश्चित रूप से है।

भारतेन्दु ने गीतों के प्रयोग के द्वारा नाटक को गति प्रदान की है तथा विषय की स्पष्टता के लिए प्रयत्न किया है। 'पाचक वाला' के माध्यम से चूर्ण बेचते हुए लेखक ने अत्यन्त तेज़ गति से तत्कालीन समाज की झांकी प्रस्तुत कर दी है। कुछ ही पंक्तियों के माध्यम से स्पष्ट कर दिया गया है कि सारे समाज में भ्रष्टाचार बेईमानी और चोर बाज़ारी का बोलबाला है। सभी एक दूसरे को हर पल ठगने और लूटने में लगे हुए हैं। राजा के दरबार और कचहरी में काम करने वाले सारे कर्मचारी रिश्वत लेकर ही काम करते हैं। उन्हे किसी को कोई परवाह नहीं है। चूरन को खाकर रिश्वत खाने और उसे तेज़ी से पचाने की क्षमता उनमें आ जाती हैं अब तो वे दुगुनी रिश्वत भी शीघ्रता से हज़म कर जाते हैं। पैसे का लेन—देन करने वाले तथा व्यापारी वर्ग के लोग बेईमान हैं। वे लोगों के द्वारा दी गई धन राशि को भी हज़म कर जाते हैं—

चूरन अमले सब जो खावैं।

दूनी रिश्वत तुरन्त पचावैं।।

चूरन नाटक वाले खाते।

इसकी नकल पचा कर लाते।।

चूरन सभी महाजन खाते।

× × × ×

चूरन खावैं एडिटर जात।

जिनके पेट पचै नहिं बात।

चूरन साहेब लोग जो खाता।

सारा हिन्द हज़म कर जाता।

चूरन पुलिस वाले खाते।

सब कानून हजम कर जाते।

भारतेन्दु ने गीतों के माध्यम से अपने पाठक को हर प्रकार से प्रभावित करने का प्रयत्न किया । उसे भक्ति का पाठ पढ़ाया है,; समाज के चित्र दिखाए हैं; शिक्षा दी है ; मूल्यहीन चेतना को यथार्थ रूप में प्रकट किया है तथा हास्य–व्यंग्य की सृष्टि भी है। 'अन्धेर नगरी' में दिए गए गीतों की प्रमुख विशेषता निम्नलिखित है––

(i) **तुकान्त छन्द का प्रयोग** : सभी गीत तुक बन्दियों में रचे गए हैं। इनमें लय की सृष्टि की गई है इसलिए इन्हें सरलता से गाया जा सकता है। स्वरमैत्री का सर्वत्र ध्यान रखा गया है––

(क) **जैसे काजी वैसे पाजी।**

रैयत राजी टके सेर भाजी।।

(ख) **अन्धाधुन्ध मच्यौ सब देसा।**

मानहुँ राजा रहत विदेसा।।

(ii) **संक्षिप्तता** : अन्धेर नगरी में स्थान प्राप्त सभी गीत संक्षिप्त आकार के हैं। भारतेन्दु ने कम शब्दों में अधिक भाव भरने की चेष्टा की है लेकिन उसने यह कार्य बड़ी सहजता से किया है––

कुल मरजाद न मान बड़ाई। सबे एक से लोग–लुगाई।।

जात पाँत पूछे नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई।।

तत्कालीन समाज की गिरावट को प्रकट करते हुए कवि ने माना है कि लोगों की दृष्टि में पत्नी और वेश्या में कोई अन्तर नहीं है। उन्हें दोनों एक–सी ही दिखाई देती हैं––

वेश्या जोरु एक समान।
बकरी गऊ एक करि जाना।।

(iii) **सरल शब्दावली प्रयोग** : भारतेन्दु ने अपने गीतों में कहीं भी कठिन शब्दों का प्रयोग नहीं किया है। ब्रज भाषा में रचित गीतों में तद्भव शब्दावली की अधिकता है। कहीं–कहीं तत्सम शब्दों का प्रयोग भी किया गया है––

(क) **ऊँच नीच कब एकहिं सारा।**

मानहुँ ब्रह्म–ज्ञान विस्तारा।।

अन्धेर नगरी अनबूझ राजा।

टका सेर भाजी टका सेर खाजा।।

(ख) कोकिल वायस एक सम। पण्डित मूरख एक।।

इन्द्रायन दाड़िम विषय । जहाँ न नेक विवेक।।

(iv) शालीनता का तत्त्व : भारतेन्दु के द्वारा 'अन्धेर नगरी' में रचित सभी गीत पूर्ण रूप से शालीन हैं। उनमें कहीं भी अशिष्टता, अश्लीलता, फूहडता और नंगापन नहीं है। बाज़ार में मछली बेचने वाली की सुन्दरता न जाने कितने लोगों को अपनी और आकृष्ट करती है। वे उसकी मोहक और आकर्षक सुन्दरता में डूबते दिखाई देते हैं। उसका यौवन तो लाख टके से भी बढ़कर है, वह तो अमूल्य है। जितने भी ग्राहक मछली खरीदने आते हैं, वे सब मछली की ओर कम आकृष्ट होते हैं बल्कि उस सुन्दर युवती के यौवन की ओर अधिक खिंचते हैं। मछली न खरीदने वाले भी रूप दर्शन के लालच में वहां खड़े रहते हैं तथा अपने मन और आँखों की तृप्ति प्रदान करते हैं। कवि ने इन भावों में कहीं अश्लीलता को नहीं आने दिया––

मछरिया एक टके कै बिकाय।

लाख टका कै वाला जोवन, गाहक सब ललचाय।।

नैन मछरिया रूप जाल में, देखत ही फंसि जाय।।

बिना पानी मछरी सो बिरहिया, मिलै बिना अकुलाय।।

(v) गेयता : सभी गीतों और तुकबन्दियों में गेयता का गुण विद्यमान है। उन्हें सरलतापूर्वक गाया जा सकता है। कहीं–कहीं तो वे भजन के गुणों से भी सम्पन्न हैं––

(क) राम भजो राम भजो राम भजो भाई।

राम के भजे से गनिका तर गई,

राम के भजे से गीध गति पाई।

राम के नाम से काम बनै सब,

राम के भजन बिनु सबहि नसाई।'

(ख) लोभ पाप का मूल है, लोभ मिटावत मान।

लोभ कभी नहीं कीजिए, या मैं नरक निदान।।

(vi) लाक्षणिकता का प्रयोग : भारतेन्दु ने अपने गीतों में अंग्रेज़ शासकों और तत्कालीन व्यवस्था पर व्यंग्य किया है लेकिन वह ऐसा खुलकर नहीं कर सके थे। इसकी रचना से कुछ वर्ष पहले ही देशी स्वतन्त्रता का पहला संग्राम असफल हो चुका था जिसमें असंख्य देशभक्तों को विदेशी सरकार के द्वारा मौत के घाट उतार दिया गया था। कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति ऐसा कदम नहीं उठाता जो उसे सीधा मौत के मुँह में धकेल देता। वैसे भी भारतेन्दु तलवार धारण करने वाले वीर नहीं बल्कि लेखनी पकड़ने वाले साहित्यकार थे। वे देशवासियों के हृदय में अपने द्वारा रचित साहित्य के माध्यम से जागृति लाना चाहते थे। उन्होंने अपने साहित्य में राजभक्ति और दशभक्ति का समन्वित रूप प्रस्तुत किया था इसलिए उन्होंने अभिधात्मक प्रयोग के साथ–साथ लाक्षणिकता को प्रयोग अधिकता से किया है, जैसे––

(क) ले हिन्दुस्तान का मेवा फूट और बैर

(ख) कीया दाँत सभी का खट्टा।

(ग) दोनों हाथ लो—नहीं पीछे हाथ ही मलते रहोगे।

(घ) जिससे जमा हजमकर जाते।

(ङ) भीतर होइ मलिनं की कारो,

चाहिए बाहर रंग चटकारो।

(vii) ब्रज अवधी मिश्रित रूप का प्रयोग : भारतेन्दु ने अपने गीतों में कोमल कान्त ने ब्रज अवधी भाषा का प्रयोग किया है जिनमें लयात्मकता और मसृणता सर्वत्र विद्यमान है। इनमें भावात्मकता की कमी है पर वर्णनात्मकता की प्रमुखता है। इसका स्पष्ट कारण है कि भारतेन्दु ने इन गीतों के माध्यम से विशेष उद्देश्य की पूर्ति करने का यत्न किया है। उन्होंने भावात्मकता को प्रकट करने का प्रयत्न नहीं किया है।

वास्तव में भारतेन्दु ने गीतों और तुकबन्दियों को विशेष उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लिखकर 'अन्धेर नगरी' में पात्रों के माध्यम से प्रकट किया है। पाठक या दर्शक के हृदय पर इनका सीधा और गहरा प्रभाव पड़ता है। ये सटीक है और प्रभाव—क्षमता से परिपूर्ण है।

प्रश्न 11 भारतेन्दुकृत 'अन्धेर नगरी' की भाषा—शैली की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

उत्तर — भारतेन्दुकाल में हिन्दी—साहित्य, भाषा की दृष्टि से, एक नई करवट ले रहा था। इस समय तक हिन्दी काव्य की रचना ब्रज या अवधी में होती थी लेकिन सामान्य बोलचाल के लिए खड़ी बोली का प्रयोग होता था। जिस खड़ी बोली का प्रयोग जनसामान्य के द्वारा किया जाता था। उसका स्वरूप भी वैसा नहीं था जैसा अब है। आधुनिक काल के इस सन्धि साहित्य में भारतेन्दु एक और प्राचीनता के प्रेमी हैं तो दूसरी ओर नवीनता के सूत्रधार भी हैं। उन्होंने कविता के क्षेत्र में ब्रजभाषा का प्रयोग ही किया और गद्य के क्षेत्र में खड़ी बोली का व्यवहार आरम्भ किया। इनकी खड़ी बोली में न तो शुद्ध संस्कृत निष्ठरूप का प्रयोग किया गया और नही उर्दमयी गद्य शैली को प्रस्तुत किया गया बल्कि इस दिशा में मध्यमार्ग का पालन करते हुए एक नया रास्ता खोज लिया गया था। अन्धेर नगरी में भाषा का नया रास्ता ही दिखाई देता है। अन्धेर नगरी में भारतेन्दु के द्वारा प्रयुक्त भाषा शैली की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं——

(i) गद्य—पद्य के लिए भिन्न भाषा—प्रयोग : अन्धेर नगरी में भाषा—प्रयोग की विविधता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। महन्त जी के उपदेशों, पदों तथा तुकबन्दियों में ब्रजभाषा का प्रयोग किया गया है, जैसे—

राम भजो राम भजो राम भजो भाई।

राम के भजे से गनिका तर गई, राम के भजे से गीध गति पाई।

राम के नाम से काम बनै सब, राम के भजन बिनु सबहि नसाई।

राम के नाम से दोनों नयन बिनु , सूरदास भये कवि कुलराई।

राम के नाम से घास जंगल की, तुलसीदास भये भजि रघुराई।।

महन्त जी जहाँ कहीं भी उपदेशात्मकता का सहारा लेते हैं। वहाँ ब्रज भाषा की कोमल—कान्त विशिष्टता दिखाई दे जाती है। लेकिन पात्रों के आपसी संवादों में खड़ी बाली का ही प्रयोग किया गया है। इतना निश्चित है कि उनकी खड़ी बोली का रूप आज की परिपक्व खड़ी बाली से कुछ भिन्न है, जैसे——

(क) बच्चा नारायण दास ! यह नगर तो दूर से बड़ा सुन्दर दिखलाई पड़ता है। देख, कुछ भिच्छा—उच्छा मिले तो ठाकुर जी का भोग लगै। और क्या !

(ख) महाराज ! कल्लू बनिया की दीवार गिर पड़ी सो मेरी बकरी उसके नीचे दब गई। दोहाई है महाराज न्याव हो।

(ग) चुप रहो, सब लोग। राजा के होते और कौन बैकुण्ठ जा सकता है। हमके फाँसी चढ़ाओं, जल्दी, जल्दी।

(ii) **शब्द–प्रयोग** : भारतेन्दु ने अपने नाटक में सभी प्रकार के प्रचलित शब्दों का सहज–सुन्दर प्रयोग किया है। गद्यात्मक संवादों में ब्रज और खड़ी बाली दोनों प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया गया है। अंग्रेज़ी शासन में फारसी –अरबी –उर्दू शब्दों का अधिकता से प्रयोग किया गया था। इनके उदाहरण बड़ी संख्या में भारतेन्दु के काव्य में दिखाई देते हैं, जैसे––

(क) **तत्सम शब्दावली का प्रयोग** : नारायण, भिक्षा, आनन्द, कवि , सिद्ध, कृष्ण मुरारी, श्याम सलौना, समर्थ, रक्षा, शिष्य, सामग्री, अन्तिम उपदेश, मान, नृपति, श्रुति, गो, द्विज, प्राण, दुर्दशा, साधू, महात्मा, परमेश्वर, गुरु, प्राण, धर्मातमा, समर्थ, सिद्ध ,गति ,आगति, ब्राह्मण, प्रतिष्ठा, कोकिल, वायय, कनक, वृष्टि, क्षण, स्मरण, प्रणाम, नित्य।

(ख) **तद्भव शब्दावली का प्रयोग** : गीध, कुलराई, भिच्छा, होंठ, चाटे, बहत्तर, सतरँगा, मन्दिर, अंधेर, आसरे, पूरब, न्याब, जम, छलिमन, दरसाई, मुटाता, धरम, मछरी, गाहक, ललचाय, कितणें, निबुआ, मुरई, मिरची, साग, लडुआ, नगरी।

(ग) **देशज शब्दावली का प्रयोग** : लकलक, बुंबुक–बंबुक, बोदा, टिकस, चौपट्ट, नैनुवा, गैया, चाभना, गुटाना, बाजे–बाजे, भाजी, खाजा, टके, अखपौड़े के गडेरिया, अबे, छन, बेर–बेर।

(घ) **विदेशी शब्दावली का प्रयोग** : कबाव, रेयत, राजी, नाहक, हाकिम, हज़म, कानून, पाजी, कसूर, बन्दे, हुक्मी, बरखास्त, इन्तजाम, दोस्त, दरबार, हिन्द, काजी, हुकुम, पीनक, लुच्चा, फर्यादी, आशना गजब, फकीर, बेशक, सबब।

(iii) **मुहावरे–लोकोक्तियों का सटीक प्रयोग** : भाषा को जीवन्तता प्रदान करने के लिए मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग बहुत आवश्यक होता है। काव्य में लाक्षणिकता का समावेश इन्हीं से होता है और गद्य को गतिशीलता की प्राप्ति होती है। भारतेन्दु ने अपने इस नाटक में मुहावरे–लोकोक्तियों का सटीक प्रयोग कर भाषा को पैनापन प्रदान किया है। नाटक का नामकरण ही लोकोक्तियों के आधार पर किया गया है––अन्धेर नगरी चौपट्ट राजा टका सेर भाजी टका सेर खाजा।

(क) **मुहावरे** : नाटक में प्रयुक्त मुहावरों के कुछ उदाहरण हैं––

(1) यहाँ के लोग बड़े **मालदार दिखलाई पड़ते** हैं।

(2) मैं तो पिया के **रंग न रंगी।**

(3) नहीं पीछे **हाथ ही मलते रहोगे।**

(4) ऐसा मुल्क जिसमें अंग्रेज का भी **दाँत खट्टा हो गया।**

(5) कीना **दाँत सभी का खट्टा।**

(6) जिनके **पेट पचै नहिं बात।**

(7) सब कानून **हज़म कर जाते।**

(8) गुरु चेले सब आनन्दपूर्वक इतने में **छक जाएंगे।**

(9) अरे, यहाँ **बड़ा ही अन्धेर है।**

(10) उसका ही फल **मुझ को भोगना पड़ा**

(11) **भौंह चढ़ाकर** सिपाहियों से।

(12) यह क्या **गोलमाल है ?**

(ख) लोकोक्तियाँ : नाटक में प्रयुक्त लोकोक्तियों के कुछ उदाहरण हैं––

(1) **गरमागरम मसालेदार––खाय सो होंठ चाटै, न खाय सो जीभ काटै।**

(2) **जो खाय सो भी पछताय जो न खाय सो भी पछताय।**

(3) **जैसे काजी वैसे पाजी।**

(iv) आंचलिक शब्दावली का प्रयोग : यद्यपि कोई भी भाषा और उसके शब्द किसी की बपौती की नहीं होते पर कुछ विशेष शब्दों का प्रयोग प्रायः पढ़े–लिखे लोग नहीं करते। अज्ञान और अशिक्षा के कारण कुछ लोग विशेष शब्दों का प्रयोग करते हैं 'अन्धेर नगरी' के कुछ लोगों की भाषा में भारतेन्दु ने ऐसे ही शब्दों का प्रयोग जानबूझ कर किया है, जैसे––

(1) अरे बाबा, क्यों बेकसूर का प्राण मारते हो ?

(2) अरे मैं बे अपराध मारा जाता हूँ।

(3) राम का नाम ले––बेफाइदा क्यों शोर करता है ?

भारतेन्दु ने कुछ ऐसे शब्द भी प्रयुक्त किए हैं जो अब प्रायः दिखाई नहीं देते, जैसे––वोई, हई, करै।

(v) पात्रानुकूल भाषा : 'अन्धेर नगरी' में सारे पात्र अपने–अपने वर्ग, स्तर और व्यवसाय के आधार पर बोलते दिखाई देते हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दावली अपने आप ही उनका स्तर बता देती है। महन्त जी का स्तर बुद्धिमत्ता और विवेक से सर्वत्र परिपूर्ण दिखाई देता है। उनमें सहजता और गम्भीरता है। उपदेशात्मकता का स्वर प्रधान है––'अरे बच्चा ! मैंने तो पहले ही कहा था कि ऐसे नगर में रहना ठीक नहीं, तैने मेरा कहना नहीं सुना।' महन्त के दोनों शिष्यों का स्वभाव उनकी बातचीत से स्पष्ट हो जाता है। नाटक में वर्णित सारा व्यापरी वर्ग विशेष प्रकार की भाषा बोलता है। घासी राम, नांरगी वाली, हलवाई, कुंजडिन, मुग़ल, पाचक वाला, मछली वाला , जात वाला ब्राह्मण, बनिया आदि सभी की भाषा में अन्तर है। यदि मुग़ल की भाषा में कुछ घमण्ड है तो बनिया की भाषा में पूर्णरूप से सहजता है। नारंगीवाली का भाषा में दोहरे अर्थ छिपे हुए हैं, **'भई नींबू से नारंगी। मैं तो पिया के रंग न रंगी। मैं तो मूली लेकर संगी। नारंगी ले नारंगी।** शराब के नशे में डूबे रहने वाले चौपट्ट राजा की भाषा में मूर्खता और अभिमान सर्वत्र झलकता है। उसकी लड़खड़ाती जुबान से बकरी को बरकी, लरकी, भेड़ आदि कहलवा कर उसकी मानसिक स्थिति को प्रकट किया है। उसका यह कहना कि, **'क्यों बे कोतवाल ? तैने सवारी ऐसी धूम से क्यों निकाली कि गडेरिया ने घबरा कर बड़ी भेड़ बेचा, जिससे बकरी गिरकर कल्लू बनिया दब गया'**––उसकी मानसिक अस्थिरता, अविवेक और बुद्धि–अनियन्त्रण को प्रकट करता है। गोवर्धनदास को बन्दी बनाने के लिए आए चार प्यादों का वार्तालाप उनके बुद्धि–स्तर को प्रकट करता है। भारतेन्दु ने नाटक के विभिन्न पात्रों के लिए जिस प्रकार की भाषा चुनी है वह अत्यन्त प्रभावशाली है। इसीलिए गिरीश रस्तोगी ने इस विषय में लिखा,''नितान्त हरकत–भरी, जीवन्त, सक्रिय भाषा, उच्चरित शब्दों की ध्वनियों और लयों का सौन्दर्य लिए हुए मिलती है।'' अन्धेर नगरी की भाषा शैली सरल, सरस, भावपूर्ण, पात्रानुकूल और जनता की शैली है। इसमें सहजता और स्वाभविकता विद्यमान हैं डॉ॰ सत्येन्द्र तनेजा ने इस विषय में लिख है, ''अन्धेर नगरी की खड़ी बोली और ब्रजभाषा का तेवर बिल्कुल भिन्न परन्तु नया है।''

(vi) **तुक बन्दियों से युक्त संवादात्मकता** : भारतेन्दु ने भाषा के माध्यम से व्यंग्य और कटाक्ष को तीखा करने के लिए तुकबन्दियों का सुन्दर प्रयोग किया है। ये तुकबन्दियां केवल काव्य–भाग में ही नहीं बल्कि गद्यात्मक संवादों में भी है––

(क) क्यों बे भिश्ती ! गंगा जमुना की किश्ती !

(ख) क्यों बे कस्साइ, मशक ऐसी क्यों बनाई कि दीवार लगाई बकरी दबाई ?

(ग) टके के वास्ते ब्राह्मण से मुसलमान, टके के वास्ते हिन्दू से क्रिस्तान।

वास्तव में तत्कालीन परिस्थितियों में भारतेन्दु के नाटक अन्धेर नगरी की भाषा–शैलीपूर्ण रूप से अनुकल है। प्रत्येक दृष्टि से यह प्रभावशाली और वांछित उद्देश्य की पूर्ति में समर्थ है। नाटककार ने अंग्रेज़ शासक को प्रतीकात्मकता के द्वारा प्रस्तुत किया और उसे फांसी पर चढ़ाकर अपना क्रोध प्रकट कर दिया और अनुकूल भाषा–शैली के माध्यम से अपनी राष्ट्रीयता की भावना को मुखरित कर दिया।